नयी शिक्षा नीति 2020 – संस्कृत भाषा

डॉ0 विनय कुमार त्रिपाठी

प्राचार्य
श्री गौरीशंकर संस्कृत महाविद्यालय
सुजानगंज जौनपुर

संस्कृत भाषा संवर्धन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

ज्ञान विज्ञान से समृद्ध अति प्राचीन भाषा संस्कृत का स्थान भारतवर्ष में अति प्राचीन है। राजनीतिक, कूटनीति, धर्मशास्त्र, न्याय शास्त्र, आयुर्वेद, शल्य चिकित्सा, साहित्य आदि सभी शास्त्रों की जननी संस्कृत है। संस्कृत ही संपूर्ण विश्व को सुसंस्कृत करने की सामर्थ्य रखने वाली भाषा है। संस्कृत कई हजार वर्षों से प्रारंभ होकर आज भी अपनी गरिमा को बनाए रखने में सामर्थ्यवान भाषा बनी हुई है। जो देववाणी कही जाती है। भारत प्राचीन साहित्य, योग, आयुर्वेद, दर्शन, आदि सभी से समृद्ध है। भारत की इस सांस्कृतिक संपदा का संरक्षण, संवर्धन एवं प्रसार देश की उच्चतर प्राथमिकता होनी चाहिए क्योंकि यह देश की पहचान के साथ–साथ भारत की अर्थव्यवस्था के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है।

संस्कृत ऐसी भाषा है जो प्रकृति को आत्मसात् कर चलती है। मानव मात्र के कल्याण की बात करती है। हमें सुसंस्कृत कर संगठित करने की बात करती है। जाति– धर्म से उठकर मानवता के गीत गाती है। विभिन्नता में एकता की लहर बहाती है। व्यवहार से अध्यात्म का पाठ पढ़ती है। जो मनुष्य को अविरल एवं निर्मल बनती है। ऐसी भाषाओं का संवर्धन एवं विस्तार करना हम सभी की जिम्मेदारी है।

शिक्षा के उन्नयन के लिए भारत सरकार द्वारा समय–समय पर शिक्षा नीतियों का निर्माण किया जाता है। इसी क्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का निर्माण किया गया। यह शिक्षा नीति 21वीं शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है। जिसका लक्ष्य हमारे देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना है। यह नीति भारत की परंपरा संस्कृति एवं विरासत के आधार पर सृजित की गई है। प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के परिपेक्ष्य में नियोजित है।

प्राचीन भारत में शिक्षा लक्ष्य सांसारिक जीवन अथवा विद्यालय के बाद के जीवन की तैयारी के रूप में ज्ञानार्जन नहीं बल्कि पूर्ण आत्मज्ञान और मुक्ति के रूप में माना गया था। तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला और वल्लभी जैसे प्राचीन भारत के विश्वस्तरीय संस्थाओं ने अध्ययन

के विविध क्षेत्रों में शिक्षक और शोध के ऊंचे प्रतिमान स्थापित किए थे और विभिन्न पृष्ठभूमि और देश से आने वाले विद्यार्थियों और विद्वानों को लाभान्वित किया था। इसी शिक्षा व्यवस्था ने चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट, वाराहमिहिर, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, चाणक्य, चक्रपाणि, माधव, पाणिनि, पतंजलि, गौतम, नागार्जुन, पिंगला, शुकदेव, मैत्रेयी, गार्गी जैसे अनेकों महान विद्वानों को जन्म दिया। इन विद्वानों ने वैश्विक स्तर पर ज्ञान के विविध क्षेत्रों जैसे गणित, खगोल विज्ञान, धातु विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, और शल्य चिकित्सा, सिविल इंजीनियरिंग, भवन निर्माण, वास्तु शास्त्र नौकायन निर्माण और दिशा ज्ञान, योग, ललित कला, शतरंज, इत्यादि में प्रामाणिक योगदान दिया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 यह शिक्षा नीति 21वीं शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है। जिसका लक्ष्य हमारे देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना है। यह नीति भारत की परंपरा संस्कृति एवं विरासत के आधार पर सृजित की गई है। प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के परिपेक्ष्य में नियोजित है।

प्राथमिक शिक्षा जिसमें सरकार की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के द्वारा कक्षा एक से कक्षा आठ तक संस्कृत भाषा को अनिवार्य किया गया है। क्योंकि प्राथमिक स्तर से ही बच्चों में भारतीय संस्कृति सभ्यता की ज्ञान के साथ संस्कार का भी बीजारोपण हो सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी)–2020 संस्कृत और संस्कृति को ध्यान में रखकर तैयार की गई है। इसलिए संस्कृत और भारतीय भाषाओं का शिक्षा में महत्व बढ़ गया है। भारतवर्ष में जन्म लेते ही हम में एक अलग आत्मविश्वास जाग जाता है। उसका मूल कारण भारतीय संस्कृति है और उस संस्कृति की जड़ में संस्कृत ही है। चीनी यात्री ह्वेनसांग भारत आया तो उसने एक दशक तक रहकर यहां के ज्ञान–विज्ञान का अध्ययन किया। लगभग छह हजार ग्रंथों को भारत

से अपने देश ले गया। उनमें से अधिकतर ग्रंथ संस्कृत में ही रहे होंगे। चूंकि वेद सबसे प्राचीन ग्रंथ है। इसलिए संस्कृत को दुनिया की पहली भाषा कहने के लिए किसी तर्क–वितर्क की जरूरत नहीं है। संस्कृत को सिर्फ़ रोज़गार से ही नहीं जोड़ा जाना चाहिए, बल्कि संस्कृत के माध्यम से वर्तमान और भविष्य की संस्कृति कैसे सुरक्षित रखी जाए यह भी बहुत बड़ा प्रश्न है। इसलिए संस्कृत के अध्ययन–अध्यापन की विशेष आवश्यकता है। नासा ने इस बात को स्वीकार किया है कि आर्टीफीशियल इंटेलिजेंस तकनीक संस्कृत भाषा को बहुत नजदीक से समझती है। यही कारण है कि संस्कृत भविष्य की भाषा है। संस्कृत के उच्चारण से मस्तिष्क की गुणवत्ता और बढ़ जाती है। इन सभी बिंदुओं को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का निर्माण किया गया। संस्कृत शिक्षा के विषय में यदि हम बात करें तो तीन स्तर पर विभाजित कर विषय वस्तु को रखा जा सकता है। पहले प्राथमिक शिक्षा जिसमें सरकार की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के द्वारा कक्षा एक से कक्षा आठ तक संस्कृत भाषा को अनिवार्य किया गया है। क्योंकि प्राथमिक स्तर से ही बच्चों में भारतीय संस्कृति सभ्यता की ज्ञान के साथ संस्कार का भी बीजारोपण हो सके। नैतिकता जैसे विषयों का ज्ञान होना अत्यधिक आवश्यक है। पुनः दूसरे क्रम में माध्यमिक शिक्षा

के विषय में तीन भाषाओं का अध्यापन करना अनिवार्य किया गया है। जिसमें एक संस्कृत भाषा भी रहेगी। इंटरमीडिएट स्तर पर दो भारतीय भाषाओं का चयन अनिवार्य किया गया है। तीसरे क्रम में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को और मजबूत करने के लिए शोध पर अत्यधिक बल देने के लिए अनेक संस्कृत विद्यालयों, महाविद्यालयों के साथ–साथ संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना करना मुख्य उद्देश्य है। जिन संस्कृत विश्वविद्यालय में संस्कृत भाषा का अध्यापन कराया जा रहा है उनमें अन्य भारतीय आधुनिक विषयों को भी लागू किया गया है। जिससे संस्कृत शिक्षा के साथ–साथ अन्य विषयों का ज्ञान भी बच्चों को प्राप्त हो सके। जो छात्र संस्कृत विषय नहीं लिए हैं उनके लिए भी अनेक विश्वविद्यालयों में अध्यापन हेतु स्वतंत्रता प्रदान की गई है। जिससे संस्कृ त भाषा का विकास एवं प्रचार दोनों संभव हो सके। अन्य विद्यालयों, विश्वविद्यालय में भी त्रिभाषा सूत्र के माध्यम से संस्कृत का प्रसार किया जाएगा।

नई शिक्षा नीति के अंतर्गत शिक्षकों के लिए व्यवसायिक विकास अनिवार्य रूप से किया गया है। शिक्षा नीति के तहत प्रारंभिक शिक्षा का स्कूली पाठ्यक्रम 5+3+3+4 के आधार पर निर्धारित हुआ है।

प्रथम चरण– जिसे 5 वर्ष के लिए किया गया है। जो प्रारंभिक शिक्षा का चरण है। जिसे फाउंडेशन स्टेज करते हैं। जिसमें तीन से 8 वर्ष तक के बच्चे शामिल होंगे। जिसमें 3 साल की प्री स्कूल शिक्षा तथा 2 साल की स्कूली शिक्षा (कक्षा एक एवं दो) शामिल है। फाउंडेशन स्टेज के अंतर्गत भाषा कौशल और शिक्षक के विकास पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

द्वितीय चरण– प्रिप्रेटरी स्टेज यह 3 वर्ष का है। जिसमें मूलतः कक्षा 3 से 5 तक की कक्षाओं की शिक्षा प्रदान की जाएगी। इसमें 8 साल से लेकर 11 साल तक के बच्चे शामिल होंगे। इस स्टेज के बच्चों को भाषा और संख्यात्मक कौशल में विकास करना शिक्षकों का मुख्य उद्देश्य है। इस स्टेज में बच्चों को क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाया जाएगा।

तृतीय चरण– मिडिल स्टेज में तीन अर्थात् 6 7 8 की कक्षाओं का समावेश किया गया है। कक्षा 6 से ही बच्चों को कोडिंग सिखाई जाएगी और उन्हें व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ–साथ इंटर्नशिप भी प्रदान की जाएगी।

चतुर्थ चरण– इसमें सेकेंडरी स्टेज को रखा गया है। अर्थात् 9 10 11 12 की कक्षाओं का समावेश किया गया है। जिसमें तीन भाषाओं के साथ ही साथ सभी विषयों को पढ़ने की स्वतंत्रता रहेगी।

उच्च शिक्षा – स्नातक कोर्स तीन या चार वर्ष के है। जिसमें कई सारे एग्जिट ऑप्शन है। जो की उचित सर्टिफिकेट के साथ होगा। जो छात्र एक साल स्नातक कोर्स में पढ़ाई की है तो उसे सर्टिफिकेट दिया जाएगा। दो वर्ष के बाद एडवांस डिप्लोमा दिया जाएगा। तीन वर्ष के बाद डिग्री दी जाएगी और 4 वर्ष के बाद रिसर्च में प्रवेश के साथ बैचलर की डिग्री दी जाएगी।गठ

एकेडमिक बैंक आफ क्रेडिट का गठन किया गया है। जिसमें छात्रों द्वारा अर्जित किए गए डिजिटल एकैडमी क्रेडिट को विभिन्न उच्च शिक्षा संस्थानों के माध्यम से संग्रहित किया जाएगा और इसे अंतिम डिग्री के लिए स्थानांतरित किया जाएगा। इस दौरान छात्र किसी भी महाविद्यालय में अध्ययन कर अपने क्रेडिट को इकट्ठा कर सकता है । महाविद्यालयों के अलावा भी बहुत से प्लेटफार्म ऐसे भी निर्मित किए गए हैं जिस पर छात्र अध्ययन कर क्रेडिट अर्जित कर सकता है। छात्रों को तीन भाषाओं को सिखाया जाएगा जिसमें अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं का समावेश किया गया है।

व्यावसायिक शिक्षा– सभी प्रकार की व्यावसायिक शिक्षा उच्च शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग होगी। एकल तकनीकी, स्वास्थ्य विज्ञान, विधि और कृषि विश्वविद्यालय अथवा अन्य–विषयों के विश्वविद्यालय, बहु–विषयक संस्थान बनने का लक्ष्य रखेंगे। वोकेशनल शिक्षा समस्त प्रकार की शिक्षा का एक अभिन्न अंग होगी। नई शिक्षा नीति का उद्देश्य वर्ष 2025 तक 50 फीसद छात्रों कोवोकेशनल शिक्षा प्रदान करना है। संस्कृत भाषा के उत्थान एवं प्रचार प्रसार के लिए उसको भी व्यावसायिक शिक्षा के रूप में प्रस्तुत करना मुख्य उद्देश्य है ज्योतिष, कर्मकांड, वास्तु शास्त्र, एवं अन्य सभी विषयों को व्यवसायिक कर रोजगार के लिए एवं ज्ञान भंडार की वृद्धि के लिए कार्य किया जाना है।

इंटीग्रेटेड कोर्स पर भी प्रचुरता से बल दिया गया है। इसी के साथ मल्टीडिस्प्लेनरी कोर्स पर भी बल दिया गया है। यह सभी व्यवस्थाएं अन्य विश्वविद्यालयों के साथ संस्कृत विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों को भी तथा संस्कृत माध्यमिक विद्यालयों को प्रदान की गई है। एनईपी में यह प्रावधान है कि 2040 तक सभी उच्च शिक्षा संस्थान (HEI) बहुविषयक संस्थान बनने का लक्ष्य रखेंगे, जिनमें से प्रत्येक में 3,000 या उससे अधिक छात्र होंगे। 2030 तक, हर जिले में या उसके आस–पास कम से कम एक बड़ा बहुविषयक संस्थान होगा। इसका उद्देश्य व्यावसायिक शिक्षा सहित उच्च शिक्षा में सकल नामांकन अनुपात को 26.3% से बढ़ाकर 2035 तक 50% करना होगा। एकल–धारा उच्च शिक्षा संस्थानों को समय के साथ समाप्त कर दिया जाएगा, और सभी बहुविषयक बनने की दिशा में आगे बढ़ेंगे। श्संबद्ध कॉलेजोंश की प्रणाली को 15 वर्षों में धीरे–धीरे समाप्त कर दिया जाएगा।

वस्तुतरू इन सब तत्वों का क्रियान्वयन हो पाना अभी पूर्णरूपेण संभव नहीं है क्योंकि बहुत से ऐसे संस्कृत विद्यालय हैं जहां पर भवन ही पूर्ण व्यवस्थित नहीं है। अध्यापकों एवं संसाधन की कमी है। फिर भी सरकार के द्वारा इन पर पूरा ध्यान केंद्रित कर उनको व्यवस्थित करने का कार्य संचालित है। आने वाले समय में निश्चित ही भारत पुनः विश्व गुरु बनेगा। यही पूरे भारत की परिकल्पना है। यही राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य एवं लक्ष्य है।

उच्च शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन

प्रो0 के0के0 तिवारी

शोध निर्देशक
शिक्षक शिक्षा विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज

ज्योति पाण्डेय

शोधछात्रा (शिक्षाशास्त्र)
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज

सारांश –

प्रस्तुत शोध प्रबंध में शोधार्थी द्वारा उच्च शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के सामाजिक आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। प्रस्तुत शोध विषय में वर्णनात्मक अनुसंधान के रुप में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग कर शून्य परिकल्पना के अंतर्गत शोधार्थी ने शैक्षिक उपलब्धि व सामाजिक आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों के मध्य सार्थक अंतर की जाँच की गई। प्रस्तुत शोध प्रबंध में वाराणसी मंडल के अंतर्गत जौनपुर जनपद के पूर्वांचल विश्वविद्यालय से संबंद्ध अनुदानित व गैर अनुदानित (शहरी व ग्रामीण) कालेजों के 100–100 विद्यार्थियों का चयन सरल यादृच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया है, शोधार्थी द्वारा प्रो0 राजबीर सिंह, प्रो0 राधेश्याम एवं सतीश कुमार द्वारा निर्मित सामाजिक–आर्थिक स्थिति स्तर मापनी का प्रयोग एवं स्नातक द्वितीय के विद्यार्थियों के वार्षिक पूर्व परीक्षा प्राप्तांक के रुप में अध्ययन किया गया है। सांख्यिकी प्रविधि के रूप में मध्यमान, मध्यांक मानक विचलन, एवं t परीक्षण का प्रयोग किया गया है परिणामतः यह पाया गया कि उच्च निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि से सार्थक अंतर पाया गया उच्च शिक्षा की छात्राओं के निम्न व उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर का शैक्षिक उपलब्धि के आधार पर सार्थक अंतर एवं अनुदानित महाविद्यलय के छात्रों का उनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि से सार्थक अंतर पाया गया।

प्रस्तावना –

मानव को संपूर्ण जगत का सर्वोच्च प्राणी माना गया है जिसके अंदर सद्विवेक सूझ–बूझ एवं अन्य मूल विधाएँ समाविष्ट है। इनका स्थानान्तरण सच्ची एवं वास्तविक शिक्षा से ही संभव है। शिक्षा मानव को एक सामाजिक प्राणी बनाकर खुशहाल जीवन व्यतीत करना सिखाती है, व्यक्ति के व्यक्तित्व का संपूर्ण स्तर से विकास शिक्षा द्वारा ही संभव है इसलिए छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि से शैक्षिक स्तर का मूल्यांकन करते हैं, परंतु वर्तमान समय में शिक्षा व्यवसायपरक् होने के कारण इसमें विभिन्न प्रकार की विसंगतियाँ होती जा रही है, जिससे कमजोर व आर्थिक तंगी से बालक पीछे हो रहे है, तथा उच्च वर्ग विकसित श्रेणी में पहुँच गए हैं बालक को तीव्र गति से अधिगम क्षमता को विकसित करने के लिए उसे सामाजिक अवसर
उपलब्ध कराने होंगे जिससे वह सफल मानव बन सके, मानव समाज में रहता है, परंतु समाज का ढाँचा एक जैसा नहीं होता, कोई व्यक्ति अत्यधिक संपन्न व सामाजिक–आर्थिक स्थिति से मजबूत होता है, तो कोई सामाजिक –आर्थिक स्थिति से कमजोर होता है जिसके कारण शैक्षिक उपलब्धि प्रभावित होती है।

हलदर दास एवं बंदोपाध्याय (2017) ने कक्षा 11वीं के विद्यालय जाने वाली बालिकाओं की सामाजिक–आर्थिक स्तर के अनुसार शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन किया तथा शारीरिक स्वास्थ्य का भी अध्ययन किया जिसका परिणाम यह निकला कि अच्छे स्वास्थ्य वाली बालिकाओं व शैक्षिक उपलब्धि का संबंध उच्च सामाजिक – आर्थिक स्तर से सार्थक रूप से सहसंबंधित था, जबकि मध्यम व निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति से संबंधित लड़कियों के समूह के मध्य उच्च सामाजिक–आर्थिक स्थिति के पश्चात संबंधित पाया गया।

बलवान सिंह (2018) ने माध्यमिक विद्यालय के बच्चों के विद्यालयी वातावरण का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभांवोध्ययन किया जिसमें यह देखा गया कि शासकीय व अशासकीय विद्यालय में पढ़ने वाले बालक–बालिका के विद्यालयी वातावरण में सार्थक अंतर पाया गया तथा इनका शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है परंतु लैगिक विभेद के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।

एकेंस व बरबारिन (2019) ने शैक्षिक उपलब्धि एवं सामाजिक आर्थिक स्तर के मध्य विभिन्न प्रकार के प्रदत्तों चरों की गहनता के साथ प्रभाव का अध्ययन किया जिसका परिणाम यह पाया गया कि बालक के विभिन्न स्तरों के अधिगम एवं अनुभवों पर काफी हद तक सामाजिक–आर्थिक स्तर प्रभाव डालती है। शोधार्थी द्वारा विद्यार्थियों के सामाजिक–अर्थिक स्तर का उनके शैक्षिक उपलब्धि से पूर्व शोध अध्ययन द्वारा गहन विश्लेषण किया गया, अधिकांशतः शोध माध्यमिक व प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थियों पर हुए शोध महत्ता को ध्यान रखते हुए उच्चतम विकास के लिए शोधकर्त्री द्वारा यह शोध उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों पर किए गए।

अध्ययन के उदेदश्य

1. उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना ।
2. उच्च शिक्षा की छात्राओं के उच्च व निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना ।
3. अनुदानित महा विद्यालय के छात्रों की उच्च व निन्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का
4. उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना ।

अध्ययन की शून्य परिकल्पना

1. उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. उच्च शिक्षा की छात्राओं के उच्च व निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
3. अनुदानित महाविद्यालय के छात्रों की उच्च व निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

मानव को संपूर्ण जगत का सर्वोच्च प्राणी माना गया है जिसके अंदर सद्विवेक सूझ–बूझ एवं अन्य मूल विधाएँ समाविष्ट है। इनका स्थानान्तरण सच्ची एवं वास्तविक शिक्षा से ही संभव है। शिक्षा मानव को एक सामाजिक प्राणी बनाकर खुशहाल जीवन व्यतीत करना सिखाती है।

बालक को तीव्र गति से अधिगम क्षमता को विकसित करने के लिए उसे सामाजिक अवसर उपलब्ध कराने होंगे जिससे वह सफल मानव बन सके, मानव समाज में रहता है, परंतु समाज का ढाँचा एक जैसा नहीं होता, कोई व्यक्ति अत्यधिक संपन्न व सामाजिक–आर्थिक स्थिति से मजबूत होता है, तो कोई सामाजिक –आर्थिक स्थिति से कमजोर होता है जिसके कारण शैक्षिक उपलब्धि प्रभावित होती है।

न्यादर्श प्रारूप –

शोधार्थी द्वारा वाराणसी मंडल के जौनपुर जनपद के पूर्वांचल विश्वविद्यालय से संबंद्व अनुदानित व गैर–अनुदानित (शहरी एवं ग्रामीण) महाविद्यालय के 100–100 विद्यार्थियों का चयन सरल यादृच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण–

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधार्थी द्वारा आंकडों का संग्रह करने के लिए प्रो0 राजबीर सिंह, प्रो0 राधेश्याम एवं सतीश कुमार द्वारा निर्मित सामाजिक–आर्थिक स्थिति स्तर मापनी एवं स्नातक द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों के वार्षिक पूर्व प्राप्तांक का प्रयोग उपकरण के रूप में किया गया।

सांख्यिकीय प्रविधियाँ–

सांख्यिकीय प्रविधि के अंतर्गत शोधार्थी द्वारा मध्यमान, मध्यांक मानक विचलन व क्रांतिक t अनुपात का प्रयोग किया गया।

प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण मध्यमान, मानक विचलन व t अनुपात के रुप में किया गया –

सारणी सं0 –01

उच्च शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि से सांख्यिकीय विश्लेषण –

क्र0 सं0	वर्ग	N	M	s.d	d.f	परिकलित t मान	सार्थकता स्तर	तलिका मान	विवरण	
1.	उच्च सामाजिक – आर्थिक स्तर के विद्यार्थी	100	5.59	1.24	198	3.01	.05	1.96	सार्थक	अस्वीकृत
2	निम्न– सामाजिक आर्थिक स्तर के विद्यार्थी	100	3.49	0.01						

सारणी सं0 – 01 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि उच्च शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर एवं उनकी शैक्षिक उपलब्धि से संबंधित मध्यमान क्रमशः 5.59 एवं 3.49 है, तथा मानक विचलन क्रमशः 1.24 एवं 0.01 है परिकलित t अनुपात का मान 3.01 है जो .05 स्तर पर सार्थक है, क्योंकि परिकलित t मान 3.01 तालिका मान 1.96 से अधिक है, अतः शून्य परिकल्पना ''उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों के उच्च एवं निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है। अस्वीकृत की जाती है परिणामतः यह कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा में अध्ययनरत विद्यार्थियों उच्च व निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

सारणी संख्या –2

उच्च शिक्षा की छात्राओं के उच्च एवं निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि से सांख्यिकीय विश्लेषण –

क्र0 सं0	वर्ग	N	M	s.d	d.f	परिकलित t मान	सार्थकता स्तर	तलिका मान	विवरण	
1.	उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर की छात्राएं	100	6.63	0.98	198	4.70	.05	1.97	सार्थक	अस्वीकृत
2	निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर की छात्राएं	100	5.36	0.47						

सारणी सं0 – 02 के अवलोकन से यह ज्ञात हुआ है कि उच्च शिक्षा की छात्राओं के उच्च एवं निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर एवं उनकी शैक्षिक उपलब्धि से संबंधित मध्यमान क्रमशः 6.63 एवं 5.36 है तथा मानक विचलन क्रमशः 0.98 व 0.47 है, परिकलित टी–मान 4.70 है जो .05 स्तर पर सार्थक है, क्योंकि t मान 4.70 तालिका मान 1.97 से अधिक है, अतः शून्य परिकल्पना ''उच्च शिक्षा की छात्राओं के उच्च एवं निम्न सामाजिक – आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है''। अस्वीकृत की जाती है। परिणामतः यह कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा की छात्राओं के उच्च एवं निम्न सामाजिक – आर्थिक स्तर का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

सारणी संख्या – 3

अनुदानित महाविद्यालय के छात्रों की उच्च एवं निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति का उनकी शैक्षिक उपलब्धि से सांख्यिकीय विश्लेषण ––

क्र0 सं0	वर्ग	N	M	s.d	d.f	परिकलित t मान	सार्थकता स्तर	तलिका मान	विवरण	
1.	उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर के अनुदानित महाविद्यालय के छात्र	60	4.7	3.32	118	3.55	.05	1.96	सार्थक	अस्वीकृत
2	निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के अनुदानित महाविद्यालय के छात्र	60	6.3	1.4						

सारणी सं0 – 03 से यह विदित होता है कि अनुदानित महाविद्यालय के छात्रों की उच्च व निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति का उनकी शैक्षिक उपलब्धि से संबंधित मध्यमान क्रमशः 4.7 व 6.3, मानक विचलन 3.32 व 1.4 तथा परिकलित टी–प्राप्तांक का मान 3.55 है जो .05 स्तर पर सार्थक है, क्योंकि परिकलित T मान 3.55 तालिका मान 196 से अधिक है अतः शून्य परिकल्पाना ''अनुदानित महाविद्यालय में अध्ययनरत् छात्रों की उच्च व निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्राभव नहीं पड़ता है। '' अस्वीकृत की जाती है। परिणामतः

यह ज्ञात होता है कि अनुदानित महाविद्यालय के छात्रों की उच्च व निम्न सामाजिक – आर्थिक स्तर उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि उच्च शिक्षा में अध्ययनरत विद्यार्थियों के सामाजिक – आर्थिक स्तर का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव पड़ता है। पूर्व शोध अध्ययन के आधार पर **(मिर्जा 2001)** में अपने शोध अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि व सामाजिक–आर्थिक स्थिति के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए शोधकार्य किया, जिसमें यह परिणाम निकला कि सामाजिक–आर्थिक स्तर का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

- **गुप्ता, एस0पी0 गुप्ता, अलका (2004)** – उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, इलाहाबाद, शारदा बुक भवन।
- **सिंह अरूण कुमार (2006) –** मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, वाराणसी : मोती लाल बनारसी दास।
- **रामपाल :–** अधिगम वातारण तथा शैक्षिक उपलब्धि शोध पत्र शिक्षक अभिव्यक्ति, हण्डिया पी0जी0 कालेज इलाहाबाद, **(2016)**

भारत–भारतीः समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ0 शिखा तिवारी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग,
डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी राजकीय महाविद्यालय, भदोही

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध काव्य कृति भारत–भारती (1912) कई सामाजिक आयामों पर विचार करने के लिए एक मार्ग प्रशस्त करती है। भारत–भारती में निहित राष्ट्रीय–चेतना के स्वर ने ही हिन्दी भाषियों में जाति और देश के प्रति गौरव की भावनाएं उत्पन्न की। भारत–भारती की आरम्भिक पंक्तियॉ जो अतीत भारत वर्ष एवं भारतीयों के प्रशस्तमान बिन्दुओं का अंकन है, अनायास ही मानस पटल पर अंकित हो उठती है–

''हम कौन थे, क्या हो गये, और क्या होंगे अभी।
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।''[1]

'भारत–भारती' लिखने पर 'भारतभारतीकार' (मैथिलीशरण गुप्त) को 1936 ई0 में 'महात्मा गाँधी' 'राष्ट्रकवि' की संज्ञा से विभूषित किये। 'राष्ट्रीय कविता' को 'हिन्दी साहित्य कोश' में इस प्रकार परिभाषित किया गया है–

''राष्ट्रीय कविता के अन्तर्गत उन कविताओं को लिया जा सकता है, जिनमें देश को एक इकाई मानकर काव्य सर्जन किया गया हो। इस प्रकार की रचनाएँ किसी सीमा तक एक विशिष्ट काल में संस्कृति और सभ्यता की जो सीमा होती है, उसका प्रतिनिधित्व करती हैं।''[2]

'भारत–भारती' में उपर्युक्त तत्त्वों जैसे–संस्कृति, सभ्यता, देश के गौरव का वर्णन आदि को प्रत्यक्षतः दृष्टिगत किया जा सकता है। 'भारत–भारती' का सर्वप्रथम प्रकाशन 1969 ई0 में हुआ। 'हरिगीतिका छन्द' में रचित इस रचना के तीन खण्ड हैं–

1. अतीत खण्ड 2. वर्तमान खण्ड 3. भविष्यत खण्ड

अतीत खण्ड में भारत वर्ष के प्राचीन गौरव की प्रशंसा की गई है। भारतीयों की वीरता, आदर्श, बुद्धि–विद्या, कला–कौशल, सभ्यता–संस्कृति, साहित्य–दर्शन, स्त्री–पुरुषों आदि का वर्णन करते हैं। 'भारत–भारतीकार', 'भारत–वर्ष' की श्रेष्ठता का वर्णन करते हुए लिखता है–

भू–लोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला–स्थल कहाँ।
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहाँ

सम्पूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है?

उसका कि जो ऋषिभूमि है, वह कौन? भारत वर्ष है।।[3]

'वर्तमान खण्ड' में कवि ने साहित्य, संगीत, धर्म, दर्शन आदि के क्षेत्र में होने वाली अवनति, रईसो के कारनामे, मंन्दिरों की दुर्गति एवं स्त्रियों की दुर्दशा का वर्णन किये हैं। अर्थात् भारत की वर्तमान अधोगति का चित्रण है।

'भविष्यत खण्ड' में भारतीयों को उद्‌बोधित करते हुए देश के मंगल की कामना की गयी है। 'भारत–भारती' के सन्दर्भ में 'बच्चन सिंह' लिखते हैं–**'' 'भारत–भारती' तो उस समय की राष्ट्रीय भावना की सिस्मोग्राफ है। इसे लिखने की प्रेरणा उन्हें 'मुसद्‌दसे–हाली' और 'कैफी' के 'भारत–दर्पण' से मिली।''**[4]

'मैथिलीशरण गुप्त' पराधीनता में यह काव्य ग्रन्थ लिख रहे थे, उस समय चारों तरफ निराशापूर्ण वातावरण था परन्तु वे हताश होकर नहीं बैठे अपितु अपने काव्य ग्रन्थ द्वारा लोगों में राष्ट्र चेतना जागृत किये। इस सन्दर्भ में एक पंक्ति उल्लेखनीय है–

'वीरों! उठो, अब तो कुयश की कालिमा को मेट दो।
निज देश को जीवन सहित तन–मन और धन भेंट दो।'
'वैश्यों ! सुनो व्यापार सारा मिट चुका है देश का।

सब धन विदेशी हर रहे हैं, पार है क्या क्लेश का।''[5]

'मैथिलीशरण गुप्त' सच्चे अर्थों में साहित्य में राष्ट्र–चेतना का स्वर मुखरित करते हुए स्पष्ट करते हैं कि कला का उद्‌देश्य मनोरंजन मात्र नहीं होना चाहिए। अपितु वह लोककल्याण की विधायक भी होनी चाहिए–

''केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए।

उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।।''[6]

'भारत' की वर्तमान दुर्दशा का कारण परतन्त्रता है। 'परतन्त्रता' मुक्ति का सर्वश्रेष्ठ उपाय आत्मगौरव है। जिस भारत वर्ष का सर्वश्रेष्ठ धन कभी आत्मसम्मान हुआ करता था उसी भारत में अपने अपमान के प्रतिकार की भी शक्ति शेष नहीं है। इस दुर्दशा पर 'गुप्त' ने अपनी व्यथा इस प्रकार व्यक्त किये हैं–**'यद्यपि हताहत गात में कुछ सांस अब भी आ रही है/पर सोच पूर्वापर दशा में मुँह से निकलता है यही/ जिसकी अलौकिक कीर्ति से उज्ज्वल हुई सारी मही/था जो जगत का मुकुट, है क्या हाय, यह भारत वही?''**[7]

भारत का गौरव सिर्फ स्मृति बनकर रह गया है। उसका प्राचीन गौरव धुँधला हो गया है। इस विषमता के प्रति वे अपने मर्म को इस प्रकार व्यक्त करते हैं–

"भारत, कहो आज क्या हो वही भारत अहो,/हे! पुण्यभूमि।
कहाँ गयी वह तुम्हारी श्री कहो?/ अब कमल क्यों,
जल तक नहीं, सर मध्य केवल पंक है,/
वह राज राज कुबेर अब हा! रंक का भी रंक है।"[8]

'भारत भारती' के 'अतीत खण्ड' में भारतीयों के वीरता का वर्णन करके देशवासियों को प्रेरित किया गया है। अपने पूर्वजों के वीरता का वर्णन करते हुए कर्मवीर, दानवीर, युद्धवीर एवं धर्मवीरता के पूर्ण स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है–

"थे कर्म्मवीर कि मृत्यु का भी ध्यान कुछ धरते न थे,
थे युद्धवीर कि काल से भी हम कभी डरते न थे।
थे दानवीर कि देह का भी लोभ हम करते न थे,
थे धर्म्मवीर कि प्राण के भी मोह पर मरते न थे।"[9]

भारत–भारती में निहित राष्ट्रीय–चेतना के स्वर ने ही हिन्दी भाषियों में जाति और देश के प्रति गौरव की भावनाएं उत्पन्न की। भारत–भारती की आरम्भिक पंक्तियॉ जो अतीत भारत वर्ष एवं भारतीयों के प्रशस्तमान बिन्दुओं का अंकन है

राष्ट्रीयता की उत्कृष्ट भावना और राष्ट्रीयता का चरम उत्कर्ष इनकी रचना में परिलक्षित होता है। कालजयी यह रचना भूतकाल को दर्पण की भॉति वर्तमान को वास्तविक प्रतिबिम्ब की भॉति और भविष्य को आदर्श बिम्ब के रूप में कल्पित करती है।

भारत–वासियों के अवनति का चित्रण करके वे उनके मन को पूर्व के उत्थान एवं वर्तमान के पतन के कारणों की तरफ लगाकर उनको सजीवता प्रदान करते हैं, जिससे देशवासी अतीत से प्रेरित होकर वर्तमान में मार्ग प्रशस्त कर सके–

"इस भाँति जब जग में हमारी पूर्ण उन्नति हो चुकी,
जैसे उठे थे, अन्त में हम ठीक वैसे ही गिरे! ।।"[10]

भारतवर्ष के अवनति के पीछे जो कारण थे उनका भी वर्णन निम्न पंकियों में करते हैं–

"फिर स्वार्थ ईर्ष्या–द्वेष का विष–बीज जो बोने लगा,
दुर्भावना के वारि से उग वह बड़ा होने लगा।
वे फूट के फल अन्त में यों फूल कर फलने लगे–
खाकर जिन्हें, जीते हुए ही, हम यहाँ जलने लगे।।"[11]

'भारतवर्ष' के अवनति के समय भी उन वीर–पुरुषों का वर्णन भी करते हैं जो इस विषमता में भी वीरतापूर्वक अपना पथ प्रशस्त किये हुए थे–

"विक्रम कि जिनका आज भी संवत यहाँ है चल रहा–
ध्रुव धर्म्म का ऐसे नृपों का उस समय भी बल रहा।
जिनसे अनेकों देश–हितकर पुण्यकार्य किये गये;
जो शक यहाँ शासक बने थे सब निकाल दिये गये।।"[12]

इस प्रकार 'भोज', 'शिवाजी' आदि के वीरता का वर्णन करते हुए देशवासियों में राष्ट्र के प्रति चेतना जागृत किया गया है।

'वर्तमान खण्ड' में स्त्रियों की शोचनीय स्थितियों का, कृषकों की विषमताओं का, सामाजिक विद्रूपताओं का, पूँजीवादियों का, अशिक्षा, तीर्थस्थल, धर्म, ब्राह्मण, शूद्र, वैश्य आदि की दीन–हीन स्थितियों का चित्रण करते हुए देशवासियों के सुप्त हृदय को अपने अस्मिता की रक्षा के लिए जागृत करने का प्रयत्न किया गया है।

'वर्तमान भारत' जो उस समय पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था उसका चित्रण निम्न पंक्तियों में किया गया है–

''यद्यपि हताहत गात में कुछ साँस अब भी आ रही
..... था जो जगत का मुकुट, है क्या
हाय! यह भारत वही।''[13]

जिस भारत–वर्ष की अपाला, गार्गी जैसी विदुषियों का ससम्मान आज भी स्मरण किया जाता है उसी भारत–वर्ष में 'वर्तमान' में स्त्रियों की दयनीयता का अत्यन्त कारूणिक चित्रण करते हैं–

''नारी–जनों की दुर्दशा हमसे कही जाती नहीं,
लज्जा बचाने को अहो! जो वस्त्र भी पाती नहीं।
जननी पड़ी है और शिशु उसके हृदय पर मुख धरे,
देखा गया है, किन्तु वे माँ–पुत्र दोनों हैं मरे।।''[14]

स्त्रियों की वर्तमान स्थिति का वर्णन करते हुए देशवासियों को इस सन्दर्भ में सोचने के लिए अग्रसित करने को प्रेरित करते हैं–

''रखतीं यही गुण वे कि गन्दे गीत गाना जानतीं,
.....हँसते हुए हम भी अहो!
वे गीत सुनते सब कहीं,
रोदन करो हे भाइयों! यह बात हँसने की नहीं।।''[15]

'भविष्यत खण्ड' में देश के नवयुवाओं को सम्बोधित करते हुए लिखते हैं–

''हे नवयुवाओं! देश भर की दृष्टि तुम पर ही लगी,
है मनुज जीवन की तुम्ही में ज्योति सब से जगमगी।
दोगे न तुम तो कौन देगा, योग देशोद्धार में ?
देखो कहाँ क्या हो रहा है आज कल संसार में।।''[16]

इस परतन्त्रता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए संगठन एवं समरसता की आवश्यकता है इसलिए देशवासियों में बन्धुत्व की भावना उत्पन्न करने के लिए सर्वप्रथम उन्हें आपस में संगठित करना चाहते हैं। इस सन्दर्भ में एक पंक्ति उल्लेखनीय है–

"प्रत्येक जन प्रत्येक जन को बन्धु अपना मान लो,?
सुख–दुःख अपने बन्धुओं का आप अपना मान लो।
सब दुःख यों बँट कर घटेगा सौख्य पावेंगे सभी
हाँ, शोक में सन्त्वना के गीत गावेंगे सभी।।"[17]

देशवासियों को प्राचीन भारत के गौरव के आधार पर अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए आह्वाहन किया गया है। देशवासियों के गुप्त हृदय में राष्ट्र–चेतना जागृत की गयी है–

"किस भाँति जीना चाहिए, किस भाँति मरना चाहिए
सो सब हमें निज पूर्वजों से याद करना चाहिए।
पद–चिन्ह उनके यत्न–पूर्वक खोज लेना चाहिए,
निज पूर्व–गौरव–दीप को बुझने न देना चाहिए।।"[18]

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध काव्य कृति भारत–भारती में न केवल भारतीयों को उनकी गौरवपूर्ण प्राचीन विरासत से परिचित कराया है अपितु वर्तमान समस्याओं पर भी विचार के लिए प्रेरित किया है। जीवन किस प्रकार से जीना चाहिए न्यूनाधिक्य को त्यागकर सम्यक जीवन–दर्शन ही भारत–भारती के केन्द्र में है। राष्ट्रीयता की उत्कृष्ट भावना और राष्ट्रीयता का चरम उत्कर्ष इनकी रचना में परिलक्षित होता है। कालजयी यह रचना भूतकाल को दर्पण की भॉति वर्तमान को वास्तविक प्रतिबिम्ब की भॉति और भविष्य को आदर्श बिम्ब के रूप में कल्पित करती है। भूतकालीन इतिहास, धर्म, संस्कृति, राजनीति, अर्थनीति के परम वैभव को व्याख्यायित करती हुई यह रचना वर्तमान स्वस्थ धर्म, दर्शन, राजनीति तथा अर्थनीति के रूप का निर्धारण करती हुई आगामी उत्कर्ष और समृद्धि के लिए सचेत करती हुई उसके काल्पनिक रूप का भी दिग्दर्शन कराती है।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची</u> :–

1. बच्चन सिंह, आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्र0, पृष्ठ सं0–109
2. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, पृ0 सं0–552
3. डॉ0 नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपर बैक्स, पृष्ठ सं0–489
4. बच्चन सिंह, आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्र0, पृष्ठ सं0–109
5. मैथिलीशरण गुप्त, भारत–भारती, साहित्य सदन,झाँसी, दशम संस्करण, पृ0 सं0–109
6. वही, पृ0 सं0–171
7. वही, पृ0 सं0–85

8. वही, पृ0 सं0—85
9. वही, पृ0 सं0—49
10. वही, पृ0 सं0—68
11. वही, पृ0 सं0—68
12. वही, पृ0 सं0—72
13. वही, पृ0 सं0—85
14. वही, पृ0 सं0—89
15. वही, पृ0 सं0—163
16. वही, पृ0 सं0—172
17. वही, पृ0 सं0—158
18. वही, पृ0 सं0—155

त्रिगुणात्मिका सृष्टि में निस्त्रैगुण्य (सांख्ययोग और वेदान्त के परिप्रेक्ष्य में)

सौरभ तिवारी

शोधच्छात्र
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

दार्शनिक परम्परा में गुण शब्द का प्रयोग एवं अनुवर्तन बारम्बार होता रहा है। न्यायवैशेषिक दर्शन में संप्त पदार्थों में गुण को परिगणित किया जाता है–

द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायाभावाः सप्तपदार्थाः।[1]

वहीं मीमांसा में गुण पद का प्रयोग प्राप्त होता है क्रियाविधि के भेद के रूप में–

क्रियारूपाणि च द्विविधा–गुणकर्माणि प्रधानकर्माणिच।[2]

इसी क्रियाविधि के भेद गुणकर्म को व्याख्यायित करते हुए रामेश्वर शिवयोगी भिक्षु मीमांसार्थसंग्रहकौमुदी में कहते हैं–

गुणस्य कर्माग्स्य द्रव्यादेः संस्कारकराणि क्रियाविशेष गुणकर्माणि याऽवघातादीनि।[3]

किन्तु सांख्यदर्शन में तथा वेदान्त में इस गुण पद का प्रयोग व्यापक रीति से दिखायी देता है। यहाँ गुण को समग्र चेतन की संसार बुद्धि का कारण माना गया है। अध्यात्मयोग के बिना बोधगम्य जो भी ज्ञान है वह भी त्रिगुणात्मक ही है। स्वयं श्रीकृष्ण ने गीता में इसकी तरफ संकेत किया है–

त्रैगुण्य विषयो वेदान् निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।

यह वही अध्यात्मयोग है जिसे नचिकेता को उपदेश करते हुए यमराज उस परमतत्व आत्मा को जानने का साधन बताते हैं–

अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति।[4]

यह अध्यात्मयोग परमसाधन होने के कारण उस परमसाध्य की प्राप्ति कराने वाला है। इसी अध्यात्मयोग को परिभाषित करते हुए महर्षि पत४जलि कहते हैं–

योगश्चित्तवृत्ति निरोधः।[5]

ध्यातत्य है कि इन चित्त–वृत्तियों के निरोध के प्रसंग में ही महर्षि चित्तभूमियों की चर्चा करते हैं और उनके प्रकार निम्नवत् निरूपित करते हैं–

1. **क्षिप्त–** रजोगुण के उद्रेक से विषयों में संयुक्त रहने वाली अवस्था।
2. **मूढ़–** तमोगुण के उद्रेक के कारण मूर्च्छा आदि व्यापारों में संलग्न चित्त।
3. **विक्षिप्त–** सत्वगुणाधिक्य, कुछ समय समाधि लगने पर रजोगुण के बीच–बीच में प्रभाव के कारण विषयों की ओर दौड़ता है।
4. **एकाग्र–** रजोगुण और तमोगुण के दब जाने से सत्वगुणैका वृत्ति का एक विषय की ओर लगे रहना।
5. **निरुद्ध–** चित्त की समस्त वृत्तियाँ दब जाती हैं, सात्विक वृत्ति का संस्कार मात्र शेष रह जाता है।

यहाँ यह बात विचार करने योग्य है कि जिन सत्वादि गुणों अथवा वृत्तियों का चित्त–भूमियों में महर्षि वर्णन कर रहे हैं, वे निश्चित रूप से त्रिगुणाधारित हैं। बात सत्वादि गुणों के उद्रेक की हो अथवा उपशम् या निरोध की हो त्रैगुण्य ही केन्द्र में होते हैं।

गुणत्रय की अपनी महत्ता, योग्यता और उपयोगिता है। यह समस्त संसार या व्यवहार जो हमें दृष्टिगोचर अथवा अनुभूत होता है गुणत्रय के कारण ही हमारे लिए प्रत्यक्ष या अनुभूति का विषय बनता है। यहाँ तक कि निरुक्तकार ने जो 'जायते, अस्ति, वर्धते, अपक्षीयते' और 'विनश्यति' अवस्थाएँ बतायी हैं, यदि उनका संक्षिप्त रूप से उत्पत्ति, स्थिति और संहार इन तीनों में ही परिगणन किया जाय तो महाकवि बाणभट्ट की दृष्टि अवश्य ही श्रेष्ठ पूज्य है–

रजोजुषे जन्मनि सत्ववृत्तौ स्थितः प्रजानाम् प्रलये तमः स्पृशम्।
अजाय तं सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः।।[6]

यहाँ कवि ने 'त्रिगुणात्मने नमः' कहा है। अर्थात् त्रिगुणयुक्त परमसत्ता को नमन किया है। अतः जगत की प्रतीति मं त्रिगुण की कारणता निर्बाध रूप से सिद्ध होती है। सांख्यदर्शन जो समग्र सृष्टि का कारण प्रकृति को स्वीकार करता है, वह गुणत्रय को ही प्रकृति का वास्तविक स्वरूप स्वीकार करता है–

त्रिगुणमविवेकि विषयः सामान्यमचेतनं प्रसवधर्मि।
व्यक्तं तथा प्रधानं तद्विपरीतस्तथा च पुमान्।।[7]

तथा–

सांख्ययोगशास्त्र ने सत्वादि गुणों को ही प्रधान कहा गया है।[8]

योग पर प्राप्त व्यासभाष्य में स्पष्ट कहा गया है–

एते गुणाः प्रधानशद्धवाच्यम् भवंति।[9]

अतः यह स्पष्ट है कि प्रकृति का स्वरूप ही त्रिगुणात्मक है। यह प्रकृति ही भिन्न क्रियाओं का आश्रय है–

कार्यकरणकर्त्तव्ये हेतुः प्रकृतिरुच्यते।[10]

इन त्रिगुणों के परिणाम– सुख, दुःख और मोह हैं। अतः यह प्रकृति सुख–दुःख और मोहात्मिका है तथा प्रकृति के समस्त विकार/परिणाम भी त्रिगुणात्मक ही है। सांख्य में यह बात पुरुष के व्याख्यान प्रसग में और भी स्पष्ट हो जाती है, जब अत्रिगुणत्व से पुरुष का कैवल्य धर्म सिद्ध होना बताया जाता है–

अत्रैगुण्याच्च कैवल्यम्।[11]

यह बात यहाँ अवश्य विचारणीय है कि पुरुष तो सदैव अत्रिगुण होता है। इसलिए अत्रिगुणत्व पुरुष में होने से कैवल्य तो उसका स्वतः सिद्ध स्वरूप है। इसी पक्ष (केवली) की ओर संकेत करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं–

गुणत्रय की अपनी महत्ता, योग्यता और उपयोगिता है। यह समस्त संसार या व्यवहार जो हमें दृष्टिगोचर अथवा अनुभूत होता है गुणत्रय के कारण ही हमारे लिए प्रत्यक्ष या अनुभूति का विषय बनता है। यहाँ तक कि निरुक्तकार ने जो 'जायते, अस्ति, वर्धते, अपक्षीयते' और 'विनश्यति' अवस्थाएँ बतायी हैं।

सांख्य योगियों की त्रिगुणात्मिका प्रकृति वेदान्त में कही गयी माया से अभिन्न सिद्ध होती हुई सांख्य योगियों और वेदान्तियों के मूल सिद्धान्त में अविरोध को ही व्याख्यायित करती है।

गुणाः गुणेषु वर्तन्ते इति मत्वा न सज्जते।[12]

जैसे रज्जु में अंधकार के कारण भासित होने वाला सर्प एक बार प्रकाश में रज्जु के वास्तविक रूप को जान लेने पर पुनः भय का कारण नहीं बनता है, उसी प्रकार त्रिगुणात्मिका प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जान लेने वाले पुरुष के लिए पुनः प्रकृति विभ्रम का कारण नहीं बनती है। फिर पुरुष तो स्वयं परम् गति होने के कारण प्रकृति के त्रिगुणात्मक स्वरूप में सदैव संपृक्त नहीं रह सकता है–

प्रकृतेः सुकुमारतरं न किञ्चिदस्तीति मे मतिर्भवति।
या दृष्टास्मीति पुनर्न दर्शन मुपैति पुरुषस्य।।[13]

पुरुष तो त्रैगुण्यराहित्य के कारण ही परमगति स्वरूप है। पुरुष तो सदैव चित्सम्पन्न चैतन्य तथा अत्रिगुण है–

पुरुषान्नपरा किञ्चित्साकाष्ठा सा परा गतिः।[14]

समस्त क्रियाओं की अधिष्ठान होने से यह त्रिगुणात्मिका प्रकृति ही बँधती और मुक्त होती है। पुरुष तो सदा मुक्त और त्रिगुणों के रहित होता है–

संसरति बध्यते मुच्यते च नानाश्रया प्रकृतिः।[15]

वेदान्त दर्शन भी इसी त्रिगुणात्मिका माया को असार–संसार का कारण स्वीकार करता है तथा निस्त्रैगुण अथवा निर्गुण सच्चिदानन्द स्वरूप में स्थित होना ही अपना चरम साध्य मानता है। वेदान्त में अज्ञान का कारण माया को माना गया है। माया से प्रकृति के अभेद को श्वेताश्वरोपनिषद् में व्यक्त किया गया है–

माया तु प्रकृतिं विद्यात् मायिनं तु महेश्वरः।[16]

महाकवि बाणभट्ट ने कादम्बरी के मग्लाचरण में– **'त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः।'** कहकर त्रिगुणात्मक परमेश्वर को नमस्कार किया है। यहाँ यह प्रश्न अत्यन्त स्वाभाविक है कि क्या महाकवि माया अथवा प्रकृति को नमस्कार कर रहे हैं? वस्तुतः **'जन्मनि रजोगुणे, स्थितौ सत्व तथा प्रलये तमः।'** कहने के उपरान्त त्रिगुणात्मने पुल्लिग के चतुर्थी एकवचन का प्रयोग माया–भिन्न किसी अन्य के लिए प्रयुक्त प्रतीत होता है। इस प्रश्न के समाधान हेतु यदि वेदान्तदृष्टया विचार किया जाय तो स्पष्ट है कि अज्ञान के समष्टि से उपहित चैतन्य को ईश्वर कहा गया है–

"इयं समष्टिरूत्कृष्टोपाधितया विशुद्ध सत्वप्रधाना। एतदुपहितं चैतन्यं सर्वज्ञत्वसर्वेश्वरत्वसर्वनियन्तृत्वादिगुणकं सदव्यक्तमन्तर्यामी जगत्कारणमीश्वर इति च व्यवच्छिद्यते सकलाज्ञानावभासकत्वात्।[17]

पुनः यह शटा उपस्थित हो सकती है कि सांख्यकारिका में मग्लाचरण में– **'अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां'** कहकर प्रकृति को अजा के साथ–साथ रजोगुणयुक्ता, सतोगुणयुक्ता तथा तमोगुणयुक्ता कहा गया है। इस पर श्रीकृष्ण गीता में समाधान प्रदान करते हैं–

दैवी ह्येषा गुणमयी मम् माया दुरत्यया।
मायेव ये प्रपद्यन्ते मायामेता तरन्ति ते।।[18]

यहाँ तो माया रूपी प्रकृति को ही नमस्कार किया जा रहा है।

भले ही भगवत्पाद शटराचार्य ने 'जन्माद्यस्ययतः'[19] सूत्र के माध्यम से ब्रह्म को ही जगत का अभिन्ननिमित्तोपादान माना है किन्तु व्यावहारिक जगत की अनुभूति माया के कारण ही है, इस सम्बन्ध में सर्वज्ञात्मकमुनि की पंक्ति द्रष्टव्य है–

जगन्महिन्ना न जगतप्रसिद्धिः न चिन्महिम्नाऽपि जगत्प्रसिद्धिः।
न च प्रमाणाज्जगतः प्रसिद्धिः स्वतोऽस्य मायामयताप्रसिद्धिः।।

अजातवादी गौणपादाचार्य कहते हैं कि न जगत का जन्म होता है, न प्रलय होता है न ही कोई बन्धन हाता है और कोई मुक्त होने के लिए साधना करता है–

न निरोधो न चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः।
न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता।।[20]

आचार्य गौडपाद का अजातवाद का सिद्धान्त वर्तमान में 'क्वांटम' का ही पूर्वरूप है और दोनों में बहुत समानता है।

सांख्यों में प्रतिपादित प्रकृति मुक्तता अथवा गौडपाद के अजातवाद का सिद्धान्त ही ज्ञान का चरम है तथा वेदान्त का परम बिन्दु है। इसी ज्ञान का प्रतिपादन विद्वानों की परीक्षा करने वाले भागवत में भी प्रतिपादित किया गया है–

बद्धो मुक्त इति व्याख्या गुणतो में न वस्तुतः।

गुणस्य मायामूलत्वान्न में मोक्षो न बन्धनम्।।

स्पष्ट है कि भारतीय दर्शन में त्रैगुण्य का चिन्तन परम वैज्ञानिक और निस्त्रैगुण्य का साधन है। सांख्यदर्शन में वर्णित त्रिगुणात्मिका प्रकृति वेदान्त की परमगति निर्गुणनिराकार चैतन्य की भी साधिका सिद्ध होती है। इस प्रकार सांख्य योगियों की त्रिगुणात्मिका प्रकृति वेदान्त में कही गयी माया से अभिन्न सिद्ध होती हुई सांख्य योगियों और वेदान्तियों के मूल सिद्धान्त में अविरोध को ही व्याख्यायित करती है। वास्तव में भारतीय मनीषा का यह अद्भुत क्रमिक प्रतिपादन ही बालमति अध्येता को भेद से अभेद तथा द्वैत से अद्वैत तक गमन करने में समर्थ बनाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1. तर्क संग्रह, व्याख्याकार, डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, प्रकाशन वर्ष 2017, पृ0 18
2. अर्थसंग्रह, कामेश्वरनाथ मिश्र, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 2019, पृ0 111
3. वही
4. कठोपनिषद्, व्याख्याकार : डॉ0 आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, प्रकाशन वर्ष 2008, पृ0 68
5. पात†जलयोगदर्शनम्, व्याख्याकार : डॉ0 सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव्य, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, संस्करण 2019, पृ0 9
6. महकवि बाणभट्ट कृत कादम्बरी, टीकाकार : प्रो0 कौशल किशोर श्रीवास्तव, प्रकाशन वर्ष 2022, पृ0 15
7. सांख्यकारिका 11, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 129
8. वही
9. वही, पृ0 130
10. श्रीमद्भगवद्गीता, 13/20, गीताप्रेस गोरखपुर, पच्चीसवां संस्करण, पृ0 58
11. सांख्यकारिका 11, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 188
12. गीता, 3/28, गीताप्रेस गोरखपुर, पच्चीसवां संस्करण, पृ0 58
13. संख्याकारिका 61, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 316
14. कठोपनिषद्, व्याख्याकार : डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, पृ0 89
15. सांख्यकारिका 62, व्याख्याकार तथा सम्पादक : डॉ0 सन्त नारायण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, संस्करण 2018, पृ0 319

16. श्वेताश्वतरोपनिषद्, गीताप्रेष गोरखपुर।
17. वेदान्तसार, डॉ0 आद्या प्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज, 2015, पृ0 42
18. श्रीमद्भगवद्गीता, 7/14, गीताप्रेस गोरखपुर, एक सौ पच्चीसवां पुनर्मुद्रण, सम्वत् 2068
19. ब्रह्मसूत्र 2, सत्यानन्द सरस्वती, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, 2019, पृ0 34
20. माण्डूक्यकारिका, 2/32, व्याख्याकार प्रो0 कौशल किशोर श्रीवास्तव, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2017, पृ0 104

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना में गबोकारो जिला की ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के जीवन पर प्रभाव का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ0 इन्दिरा श्रीवास्तव

एसो0 प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग
ईश्वर शरण पी0जी0 कालेज, प्रयागराज
इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज

नीतू शुक्ला

शोध छात्रा
समाजशास्त्र विभाग
ईश्वर शरण पी0जी0 कालेज, प्रयागराज
इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय

सारांश–

ग्रामीण जनजातीय महिलाओं को सुदृढ़ बनाने के लिए महिला सशक्तीकरण कार्यक्रम प्रारम्भ करने की जरूरत है। भारत की केन्द्र सरकार के द्वारा 1 मई 2016 को प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना शुरूवात की गयी थी। जिसका उद्देश्य ग्रामीण जनजातीय महिलाओं को रोजगार एवं मिट्टी के चूल्हे से मुक्ति मिल सके। यह शोध प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना से ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के जीवन जीने के तरीके को समझना है। यह वर्णनात्मक शोध पत्र झारखण्ड के बोकारो जिले के मोहाल गांव की जनजातीय महिलाओं पर किया गया है। इसके अन्तर्गत मोहाल गांव की ग्रामीण जनजातीय महिलाओं पर प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना के प्रभाव और उनके जीवन और आजीविका पर इसके प्रभाव का विश्लेषण करता है। जिसमें इस गांव की 50 ग्रामीण जनजातीय महिला उत्तरदात्रियों से एक सरंचित साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग करके आंकड़ों को एकत्र किया गया है। अध्ययन के निष्कर्षों से पता चलता है कि प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना से ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के जीवन एवं व्यवहार में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है।

संकेत शब्दः–प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना (पी0एम0यू0वाई0) ग्रामीण महिलाओं, आजीविका में परिवर्तन स्वच्छ ईंधन, एलपीजी रिफिल।

प्रस्तावना–

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना केन्द्र सरकार द्वारा बीपीएल परिवार की महिलाओं के लिए केन्द्र सरकार द्वारा 1 मई 2016 को शुरू की गयी योजना है। इस योजना के अन्तर्गत बीपीएल परिवार की 18 वर्ष या उससे अधिक उम्र की महिलाओं को निःशुल्क एलपीजी गैस सिलेण्डर मिल रहा है। इस योजना की शुरूआत उत्तर प्रदेश के बलिया क्षेत्र में हुई। जिसका नारा ''स्वच्छ ईंधन बेहतर जीवन'' था। इस योजना की पात्र महिलाओं को उनके खाते में 1600 रुपये की राशि दी जाती है। आरम्भ में यह योजना 5 करोड़ बीपीएल परिवार को कवर कर रही थी, लेकिन 2019–20 में संशोधन के बाद इस योजना के अन्तर्गत 8 करोड़ परिवार को कवर किया जा रहा है। इस योजना का लाभ सोसियो इकोनामिक एण्ड कास्ट सेंसस (एसईसीसी–2011) लिस्टेड हो, प्रधानमंत्री आवास योजना में सभी एससी, एसटी परिवार के लोग, गरीबी रेखा से नीचे आने वाले लोग या अंत्योदय योजना के अन्तर्गत आने वाले लोगों, वनवासी एवं अधिकांश पिछड़े वर्ग के लोग ले सकते हैं। पेट्रोलियम और प्राकृतिक मंत्रालय के अनुसार, प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना ने एलपीजी उज्ज्वला योजना ने एलपीजी की लागत को बहुत कम कर दिया है। पहले एलपीजी गैस कनेक्शन कराने के लिए 4000 से 5000 रुपये खर्च करना पड़ता था। बल्कि थोक खरीद ने इसे घटाकर 3200–/रुपये कर दिया है। इस योजना के तहत केन्द्र सरकार द्वारा लाभार्थियों को आधा पैसा एक मुक्त अनुदान के रूप में मिल जाता है। महिला उपयोगकर्ता को एलपीजी गैस और पहली रिफिल की कुछ लागत 1600 रुपये पड़ती है। इसके लिए तेल विपणन निगम (ओएमसी) आसान मासिक किस्त अर्थात् ईएमआई विकल्प दे रही है। महिलाा द्वारा लिया गया ऋण रिफिलिंग वसूल जाने के बाद धनजारी रहता है और महिला उपयोककर्ता के बैंक में स्थानान्तरित कर दिया जाता है।

ग्रामीण महिलाओं को समाज में निम्न स्तर से उच्च स्तर में लाने के लिए विभिन्न प्रकार की योजनाएं बनायी गयी है। पीएमयूवाई ग्रामीण लोगों को घरेलू वायु प्रदूषण की समस्या को कम करने के साथ–साथ अधिक सशक्त करने के लिए उत्कृष्ट प्रयास हैं, उज्ज्वला योजना की प्राप्तकर्ता महिलाएं कम जागरूक है। अतः आज भी कुछ गांवों में पारम्परिक चूल्हे का उपयोग हो रहा है। जिसके कारण वे अपने स्वास्थ्य, पर्यावरण और सशक्तिकरण के महत्व को अनदेखा कर रहे है।

साहित्य पुनरावलोकन–

- **नंदा, बी0सी0 प्रधान (2019)** ने बताया कि भारत में एक बड़ा हिस्सा अपनी रसोई में ठोस एवं बायोमास जैसी अशुद्ध ईंधन का उपयोग करती है। जिसमें उनके स्वास्थ्य पर खतरा है।

- **एस0 सिंह तथा पी0 दीक्षित (2019)** ने अपने लेख में बताया कि प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना के बाद भी ग्रामीण परिवार के लोग ठोस ईंधन का उपयोग कर रहे है।
- **त्रिपाठी (2019)** ने अपने लेख में बताया कि पारम्परिक ईंधन का उपयोग महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति में बाधा डालती है, क्योंकि महिलाओं द्वारा ईंधन को इकट्ठा करने में प्रतिदिन का अधिकांश समय बर्बाद होता है।
- **अग्रवाल, कुमार और तिवारी (2018)** ने अपने लेख में बताया कि घरेलू वायु प्रदूषण के कारण इन ईंधनों का निरन्तर उपयोग महिलाओं और उनके परिवार के स्वास्थ्य को बुरी तरह से प्रभावित करता है। जिससे फेफड़ों और हृदय संबंधित रोग होते है।
- **शर्मा, पारिख और सिंह (2019)** ने अपने लेख में बताया कि घरेलू वायु प्रदूषण के कारण भारत में प्रत्येक वर्ष लगभग 5 लाख से 10 लाख लोगों की मौत हो रही है।
- **पवन पाण्डेय और सुश्रुत शर्मा (2017)** ने अपने लेख में बताया कि स्वास्थ्य की स्थिति बीमारियों के इलाज करने से नहीं बल्कि प्रेरक और निवारक उपायों को अपनाने से होती है। नागरिक स्वस्थ आदतों के बारे में जागरूक हो और ऐसी आदतों के बारे में जागरूक हो और ऐसा वातावरण मौजूद हो जो ऐसी आदतों को अपनाने को प्रोत्साहित करता है।

ग्रामीण महिलाएं घर पर आसान एवं मुफ्त उपलब्ध ईंधन का आज भी उपयोग कर रही है। गैस की बढ़ती कीमत के कारण एलपीजी सिलेण्डर का उपयोग कम कर रही है। वह यह भी सोचती है कि उज्ज्वला योजना के माध्यम से गैस सिलेण्डर रिफिल कराने से आजीविका को बदलने में मदद नहीं मिल सकती है। अधिकतर ग्रामीण महिलाएं अशिक्षित है और उनके पास रोजगार कौशल नहीं है, उन्हें कोई नौकरी नहीं मिलेगी वे कृषि कार्य और मजदूरी ही कर सकते हैं। प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना को झारखण्ड के बोकारो जिले के मोहाल गांव की जनजातीय महिलाओं के बीच व्यवहार परिवर्तन पर इसके प्रभाव पर बहुत कम शोध किया गया था, इसलिए शोधकर्ता इस विषय पर अध्ययन करना चाहती है।

अध्ययन का उद्देश्य–

इस अध्ययन का निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त करना है।

1. अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण जनजातीय महिला उत्तरदात्रियों के जनसंख्यिकीय प्रोफाइल का अध्ययन करना।
2. प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना और ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के बीच व्यवहार परिवर्तन पर इसके प्रभाव का पता लगाना।

अनुसंधान पद्धति–

उद्देश्य की दृष्टि से वर्तमान अध्ययन एक अनुभवजन्य प्रकार का है। जिसमें आंकड़ों को एकत्र करने के लिए अन्वेषणात्मक एवं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का अनुसरण किया गया है। यह अध्ययन झारखण्ड के बोकारो जनपद के मोहाल गांव की जनजातीय महिलाओं पर आधारित है। जिन्हें घर पर भोजन बनाने के लिए पीएमयूवाई के तहत एलपीजी कनेक्शन प्राप्त हुआ है। यह अध्ययन पूर्णतः प्राथमिक डाटा पर आधारित है। तथ्य संकलन की प्रमुख प्रविधि के रूप में साक्षात्कार अनुसूची एवं उद्देश्यात्मक निर्देशन का प्रयोग करके 50 परिवारों में प्रत्येक परिवार की एक महिला का चयन किया गया है।

ग्रामीण जनजातीय महिलाओं को सुदृढ़ बनाने के लिए महिला सशक्तीकरण कार्यक्रम प्रारम्भ करने की जरूरत है। भारत की केन्द्र सरकार के द्वारा 1 मई 2016 को प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना शुरूवात की गयी थी। जिसका उद्देश्य ग्रामीण जनजातीय महिलाओं को रोजगार एवं मिट्टी के चूल्हे से मुक्ति मिल सके।

इस योजना की शुरूआत उत्तर प्रदेश के बलिया क्षेत्र में हुई। जिसका नारा ''स्वच्छ ईंधन बेहतर जीवन'' था। इस योजना की पात्र महिलाओं को उनके खाते में 1600 रुपये की राशि दी जाती है। आरम्भ में यह योजना 5 करोड़ बीपीएल परिवार को कवर कर रही थी, लेकिन 2019–20 में संशोधन के बाद इस योजना के अन्तर्गत 8 करोड़ परिवार को कवर किया जा रहा है।

परिणाम एवं विश्लेषण–

अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण जनजातीय महिला उत्तरदात्रिओं के जनसांख्यिकीय प्रोफाइल को सारणी 1, 2, 3 एवं 4 में और प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना प्रभाव एवं ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के बीच व्यवहार परिवर्तन पर इसके प्रभाव को सारणी 5, 6, 7, 8 एवं 9 में बताया गया है।

सारणी संख्या–1

उम्र के आधार पर उत्तरदात्रियों का विवरण

उम्र समूह वर्षों में	आवृत्ति	प्रतिशत
18–29	10	20
30–39	20	40
40–49	14	28
50 या 50 वर्षों से अधिक	6	12
योग	**50**	**100**

उपरोक्त सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 40 प्रतिशत महिलाओं की आयु (30–39) वर्ष के बीच है। अतः इस प्रकार स्पष्ट होता है कि अधिकतर महिलाएं (30–39) वर्षों के बीच है।

सारणी संख्या–2

शैक्षिक स्तर के आधार पर उत्तरदात्रियों का विवरण

शैक्षिक स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
अशिक्षित	35	70
प्राथमिक शिक्षा	7	14
उच्च प्राथमिक शिक्षा	3	6
हाईस्कूल	2	4
इण्टरमीडिएट	2	4
स्नातक	1	2
योग	**50**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणामों से महिला उत्तरदात्रियों का शैक्षिक स्तर पता चलता है, जिसमें 70 प्रतिशत अशिक्षित, 14 प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा, 6 प्रतिशत उच्च प्राथमिक शिक्षा, 4 प्रतिशत हाईस्कूल, 4 प्रतिशत इण्टरमीडिएट और 2 प्रतिशत स्नातक महिलाओं द्वारा किया गया है। अतः इस प्रकार स्पष्ट होता है कि अधिकतर (70 प्रतिशत) महिलाएं अशिक्षित श्रेणी में है।

सारणी संख्या–3

उत्तरदात्रियों के परिवार सदस्यों की संख्या

सदस्यों की संख्या	आवृत्ति	प्रतिशत
1–4	18	36
5–8	28	56
9–12	4	8
योग	**50**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणामों से महिला उत्तरदात्रियों के परिवारों की सदस्य संख्या पता चलती है जिसमें 1–4 सदस्यों वाले परिवार का 36 प्रतिशत, 5–8 सदस्यों वाले परिवार का 56 प्रतिशत और 9–12 सदस्यों वाले परिवार का 8 प्रतिशत है। अतः इससे निष्कर्ष निकलता है अधिकतर सदस्य वाले परिवार की संख्या (5–8) है।

सारणी संख्या–4

उत्तरदात्रियों के परिवार की मासिक आय का विवरण

मसिक आय	आवृत्ति	प्रतिशत
0–4999	18	36
5000–9999	21	42
10000–14999	8	16
15000 से अधिक	3	6
योग	**50**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणामों से स्पष्ट हेाता है कि उत्तरदात्रियों के परिवार की मासिक आय 0–4999 के बीच 36 प्रतिशत, 5000–9999 के बीच 42 प्रतिशत, 10000–14999 के बीच 16 प्रतिशत, 15000 से अधिक में 6 प्रतिशत है। अतः उत्तरदात्रियों के परिवार की सबसे अधिक आय 5000–10000 के बीच एवं सबसे कम 15000 से अधिक मासिक आय वाले है।

सारणी संख्या–5

उत्तरदात्रियों की एक वर्ष में एलपीजी रिफिल की संख्या

रिफिल की संख्या	आवृत्ति	प्रतिशत
1–2	22	44
3–5	14	28
6–8	10	20
9–12	4	8
योग	**50**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणामों से स्पष्ट होता है कि उत्तरदात्रियों को एक वर्ष में एलपीजी रिफिल की संख्या 1–2 के बीच 44 प्रतिशत, 3–5 के बीच 28 प्रतिशत, 69–8 के बीच 20 प्रतिशत और 9–12 के बीच 38 प्रतिशत है। अतः सबसे अधिक लोग साल भर में 1–2 सिलेण्डर रिफिल करा रहे है जिसका मुख्य कारण गैस सिलेण्डर का महंगा होना है।

सारणी संख्या–6

उत्तरदात्रियों द्वारा मिट्टी के चूल्हे का उपयोग

मिट्टी के चूल्हों का उपयोग	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	28	56

नहीं	22	44
योग	**50**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणामों से स्पष्ट होता है कि पीएमयूवाई योजना का लाभ मिलने के बाद भी 56 प्रतिशत महिला उत्तरदात्रियों के द्वारा मिट्टी के चूल्हे का उपयोग किया जा रहा है जबकि 44 प्रतिशत महिला उत्तरदात्रियों द्वारा केवल एलपीजी गैस सिलेण्डर का ही उपयोग किया जा रहा है।

सारणी संख्या–7

उत्तरदात्रियों का आर्थिक गतिविधियों में सहयोग

आर्थिक गतिविधियों में उपयोग	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	26	52
नहीं	24	44
योग	**50**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणाम से स्पष्ट होता है कि 52 प्रतिशत महिला उत्तरदात्री आर्थिक गतिविधियों में सहयोग कर रही है जबकि 48 प्रतिशत महिला उत्तरदात्री गृहणी है।

सारणी संख्या–8

व्यवसाय के आधार पर उत्तरदात्रियों का विवरण

व्यवसाय का प्रकार	आवृत्ति	प्रतिशत
कृषि	3	11.54
मजदूरी	11	42.31
दुकानदार	4	15.38
आंगनबाड़ी कार्यकर्ता	2	7.69
स्कूल में खाना बनाना	1	3.85
सिलाई	2	7.69
अन्य	3	11.54
योग	**26**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणामों से स्पष्ट होता है कि 11.54 प्रतिशत, महिला उत्तरदात्री कृषि क्षेत्र में 42.31 प्रतिशत मजदूरी, 15.38 प्रतिशत दुकानदार, 7.69 प्रतिशत आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, 3.

85 प्रतिशत स्कूल में खाना बनाने का, 7.69 प्रतिशत सिलाई और 11.59 अन्य कार्यों में संलग्न है।

सारणी संख्या–9
उत्तरदात्रियों के जीवन में परिवर्तन

जीवन में परिवर्तन	आवृत्ति	प्रतिशत
राख व धुआ से मुक्ति	12	24
स्वच्छ एवं स्वास्थ्य वातावरण	11	22
समय की बचत	7	14
कोई बदलाव नहीं	20	40
योग	**26**	**100**

उपरोक्त सारणी के परिणामों से स्पष्ट होता है कि पीएमयूवाई योजना का लाभ मिलने के बाद 60 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के जीवन में बदलाव आया जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के जीवन में कोई बदलाव नहीं आया।

निष्कर्ष–

इस अध्ययन में विश्लेषण के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि पीएमयूवाई उन सभी ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के लिए एक महत्वकांक्षी योजना है। इस योजना के माध्यम से ग्रामीण जनजातीय महिलाओं को अशुद्ध या ठोस ईंशन का उपयोग करने के अधिक परिश्रम से बचाया जा रहा है। 1 मई 2016 को गैस का दाम लगभग 577 रु0 था। जबकि आज गैस का दाम 1156 है। जिसको रिफिल कराना ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के लिए अत्यन्त कठिन है। ग्रामीण जनजातीय महिलाएं 400/–रु0 की लकड़ी एक माह तक चलाती है। जबकि गैस रिफिल कराना उनके लिए त्रिगुना कीमत अदा करना है। इस प्रकार ग्रामीण जनजातीय महिलाओं के जीवन एवं व्यवहार में कम परिवर्तन आया है।

सुझाव–

1. पीएमयूवाई योजना का लाभ मिलने के बाद ग्रामीण जनजातीय महिलाओं को उच्च लागत, 1156/–रु0 में गैस रिफिल कराना पड़ता है। अतः उनके लिए गैस सिलेण्डर की कीमत कम करना चाहिए।
2. पीएमयूवाई योजना के लाभार्थी 14.2 किलो का एक सिलेण्डर न लेकर यदि 5 किलो का दो सिलेण्डर ले तो उन्हें भराने एवं रिफिल कराने में सरलता होगी। क्योंकि वे 5 किलो का सिलेण्डर कम पैसे में भरा सकते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

- Aggarwal, S., Kumar, S, & Tiwari, M. K. (2018). Decision support system for Pradhan Mantri ujjwala yojana. Energy Policy, 118 (January), 455-461.https://doi.org/10.1016/j.enpo1. 2018.04.011.
- Hammeed, G., Orifan, M., Ijeoma, M. & Tijani, S. (2016). Assessment Of the Use of Liquefied Petroleum Gas (LPG) as Cooking Energy Source Among Rural Household in Badagry Area of Lagos State Technology and Sciences (ASRJETS) American Scientific Research Jindal for Engineering, 18 (1), pp (16-28). Retrieved form https:// asrjetsjournal.org/.
- Kar A, Pachauri S,Bailis R, Zerriffi H. (2019), Using Sales Date TO Assess Cooking Gas Adoption and the Impact of India`s Ujjwala Programme in Rural Karnatak Nature Energy 4 (9) pp (806-814).
- Nanda, B.C., (2019). Pradhan Mantri Ujjwala Yojana as a tool of women empowerment:An assessment. Mahila Pratishtha, 4 (4), 231-241.
- Sahoo K, Manoj, Patel Palak and Patel, Rootu: Grassroots Energy security for india's poor and women empowerment: An assessment fo Pradhan Mantri Ujjawala Yojana. ISSN 2231-0924 Volume 8, No. 2 July-December 2018, pp-18-27.
- Sharma, Ashutosh and Singh, Chandraeshkar. "Transition to LPG for cooking. A case Study from two states of India "Energy for sustainable development , volume 51, sugguest 2019, page (63-72).
- Singh S. & Dixit P. (2019) "Impact of household air pollution exposure on rural India". A Systematic review, environment conservation Journal 20 (1 & 2) pp (115-132).
- Tripathi, S.K. Pradhan Mantri Ujjwala Yojana (PMUY): Women Empowerment in India EI SSUL 3. SEr. II (March-2019, pp-81-83). https://doi.org/10.9790/487x-2103028163.

वाद्यों में वाद्य प्रचलित अवनध्द वाद्य 'तबला'

प्रो0 मीना सिंह

संगीत विभाग
पी0जी0 कॉलेज, गाजीपुर

शैल गुप्ता

शोध छात्रा
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय,
जौनपुर

भारतीय संगीत जगत में हमेशा से ही गायन, वादन, नृत्य तीनों कलाओं का समावेश **'**संगीत**'** कहलाता है।

"संगीत जगत में प्राचीनकाल से ही वाद्यों की चार श्रेणियाँ प्रचलित हैं– तत्, सुषिर, घन, अवनध्द।**"** तत् वाद्यों में सितार, वीणा, सरोद, तानपूरा**;** सुषिर वाद्यों में हारमोनियम, शहनाई, बासुरी**;** घनवाद्यों में जलतरंग, काष्ठतरंग और अवनद्ध वाद्यों में तबला, पखावज, ढोल, मृदंगम् इत्यादि वाद्य शामिल है।

भारतीय संगीत जगत में संगीत की तीनों विधाओं (गायन, वादन और नृत्य) को दो प्रमुख उप–विधाओं 'शास्त्रीय संगीत और उपशास्त्रीय संगीत' में बाँटा गया है। दोनों उप–विधाओं में आवश्यकतानुसार अलग–अलग सांगीतिक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। उपर्युक्त लिखित वाद्यों में कुछ वाद्य स्वर और कुछ ताल–वाद्य है। प्रमुख स्वर वाद्यों में हारमोनियम और तानपूरा तथा प्रमुख ताल वाद्यों में तबला, पखावज, मृदंगम् इत्यादि प्रचलित है किन्तु उपर्युक्त वाद्यों में प्रयोग की दृष्टि से सर्वाधिक लोकप्रिय व प्रसिद्ध वाद्य यदि कोई है तो वह है वाद्यों में वाद्य प्रचलित अवनद्ध वाद्य 'तबला'।

किन्तु मुख्य विषय–वस्तु का विस्तृत वर्णन करने से पूर्व संगीत का संक्षिप्त ज्ञान होना भी आवश्यक है। जिससे मुख्य विषय–वस्तु को भली– भाति सरलता व सहजता से समझा जा सके।

प्राचीनकाल से ही संगीत की उत्पत्ति मानी जाती है। सामवेद युग से ही संगीत धीरे–धीरे जन–मानस पटल पर अपनी छाप छोड़ने लगा था। प्राचीनकाल से मध्यकाल तक संगीत उन्नति और विकास की सीढियाँ चढ़ने लगा था। उन्नति और विकास की यह क्रिया संगीत की गायन और नृत्य विधा के साथ–साथ वाद्य की समस्त श्रेणियों में भी क्रियान्वित होने लगी थी।

उत्तर– मध्यकाल का युग संगीत का सबसे अहम युग माना जाता है क्योंकि वर्तमान समय में जो भी 'सांगीतिक सैद्धान्तिक व क्रियात्मक' सामग्री उपलब्ध है वे अधिकांशतः

उत्तर–मध्यकाल की ही देन है। वर्तमान समय में जो भी रागें, तालें एवं संगीत पद्धतियाँ अध्ययन स्वरूप प्रचलन में है। वे सब उत्तर–मध्यकाल द्वारा ही, प्रदान की गयी 'अमूल्य सांगीतिक निधि है'। इसके अतिरिक्त मध्यकाल ने विभिन्न वाद्यों को भी जन्म दिया है जो आज भी भारतीय संगीत में प्रचलित है। चूँकि मध्यकाल ने संगीत की अपार सेवा की इसीलिए उत्तर–मध्यकाल को संगीत का युग कहा जाता है। मध्यकाल द्वारा प्रदान की गयी अमूल्य निधि सदा ही सांगीतिक प्रेमियों को लाभान्वित करती रहेंगी।

भारतीय संगीत जगत में संगीत की तीनों विधाओं (गायन, वादन और नृत्य) को दो प्रमुख उप–विधाओं 'शास्त्रीय संगीत और उपशास्त्रीय संगीत' में बाँटा गया है। दोनों उप–विधाओं में आवश्यकतानुसार अलग–अलग सांगीतिक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है।

अवनद्ध श्रेणी के जितने भी वाद्य है यद्यपि वह पखावज, मृदंगम्, ढोलक या नाल हो, इन सभी अवनद्ध वाद्यों में तबला अपनी माधुर्य ध्वनि के कारण सभी अवनद्ध वाद्यों में सर्वोच्च स्थान को धारण किए हुए है।

प्राचीनकाल से ही संगीत की उत्पत्ति हो चुकी थी और प्राचीनकाल से वर्तमान काल तक संगीत का सफर प्रगतिशील रहा है न सिर्फ संगीत की मात्र एक विधा अपितु संगीत की सभी विधाएँ प्रगति पथ प्रदर्शक रही है और भविष्य में भी अर्थात् आगामी दिनों में भी संगीत की तीनों विधाएँ व उससे सम्बन्धित प्रत्येक क्षेत्र, प्रगति–पथ–प्रदर्शक व उन्नतिशील ही रहेंगी। संगीत की सभी विधाएँ लोकप्रिय है और अपनी–अपनी विशिष्टताओं के कारण जन–मानस पटल पर विराजमान भी है किन्तु यदि विधाओं को लोकप्रियता का श्रेणी–क्रम प्रदान किया जाए तो गायन विधा सर्वोच्च स्थान पर, वादन–विधा द्वितीय तथा नृत्य विधा तृतीय स्थान को धारण किए हुए है। इस प्रकार लोकप्रियता के आधार पर क्रमशः गायन, वादन तथा नृत्य को श्रेणी क्रम प्रदान है।

यद्यपि गायन–विधा सर्वोच्च लोकप्रियता को धारण किए हुए हैं किन्तु वादन विधा के अन्तर्गत वाद्यों में वाद्य प्रचलित अवनद्ध वाद्य 'तबला' भी अपनी लोकप्रियता का पंचम वर्तमान समय में लहरा रहा है। यद्यपि वादन विधा में तत्, सुषिर, घन, अवनद्ध वाद्य शामिल है किन्तु सभी श्रेणी के वाद्यों में अवनद्ध श्रेणी का वाद्य 'तबला' सर्वोपरि है।

"तबले की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों ने अपने अलग–अलग मत प्रस्तुत किए हैं। भारतीय संगीत जगत में खुसरो खा, अमीर खुसरो और उस्ताद सिद्धार खाँ नाम के उच्चकोटि के संगीतज्ञ थे। कुछ संगीतज्ञों अर्थात् सांगीतिक विद्वानों के अनुसार खुसरो खाँ तबले के जन्मदाता माने गए है तो कुछ विद्वानों ने उस्ताद सिद्धार खाँ को तबले का जन्मदाता बताया है किन्तु

अधिकांश विद्वानों के अनुसार सर्वसम्मति से 'अमीर खुसरो' को तबले का जन्मदाता माना जाता है। इस प्रकार तबले के जन्मदाता अमीर खुसरो है।"

आज के इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में विभिन्न वाद्यों में तबला नामक अवनद्ध वाद्य अपना एक अलग स्थान बनाए हुए है। अवनद्ध श्रेणी के जितने भी वाद्य है यद्यपि वह पखावज, मृदंगम्, ढोलक या नाल हो, इन सभी अवनद्ध वाद्यों में तबला अपनी माधुर्य ध्वनि के कारण सभी अवनद्ध वाद्यों में सर्वोच्च स्थान को धारण किए हुए है। अपनी ध्वनि विशिष्टता के कारण ही तबला न सिर्फ सभी अवनद्ध वाद्यों में अपितु सभी श्रेणी के वाद्यों में सर्वोपरि है। इसका कारण यह है कि तबला एक ऐसा वाद्य है जो संगत की दृष्टि से सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है अर्थात् गायन के क्षेत्र में संगत की दृष्टि से तबला सर्वाधिक प्रयोग किया जाने वाला वाद्य है। जो स्थान संगत के क्षेत्र में तबले को प्राप्त है वहीं स्थान प्राचीन काल से मध्य काल तक मृदंग (पखावज) को प्राप्त था। इसका मुख्य कारण ध्रुपद, धमार गायकी का प्रचार–प्रसार था।

प्राचीन काल (आदिकाल–800 ई. तक) से मध्यकाल (800 ई. से 1800 ई. तक) तक ध्रुपद और धमार गायकी के साथ संगत के दृष्टिकोण से मृदंग (पखावज) वादन को सर्वोत्तम माना जाता था किन्तु जब भारत पर मुस्लिम संस्कृति का प्रचार–प्रसार हुआ, फलस्वरूप ख्याल गायकी की परम्परा शुरू हुई। जिसके परिणामस्वरूप संगत के दृष्टिकोण से 'तबला अवनद्ध वाद्य' प्रचार में आया। जैसे–जैसे समय परिवर्तित होता गया, समय परिवर्तन के साथ–साथ ख्याल, टप्पा, ठुमरी, गज़ल, भजन आदि श्रृंगारिक गायन शैलियों का प्रचार–प्रसार बढ़ा और इस प्रकार की श्रृंगारिक गायन शैलियों के साथ गंभीर नाद युक्त मृदंग का संगत अनुपयुक्त था जिसके परिणामस्वरूप तबला वाद्य अपनी मधुर ध्वनि विशिष्टता के कारण उभर कर आया और तबले का संगत के रूप में प्रयोग किया जाने लगा। तबले पर मृदंग के खुले तथा जोरदार बोलों के साथ–साथ, ढोलक के समान मींडयुक्त व बन्द बोलों का निकास सरलता व सहजता से सम्भव हो पाया। इस प्रकार एक साथ कई अवनद्ध वाद्यों (मृदंग, नाल, ढोलक) के बोलों का निकास एक मात्र तबला पर सम्भव हो पाया। इसीलिए 'तबला' संगत के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध माना जाने लगा।

इस प्रकार बोलों के सरल निकास, मिठास तथा विभिन्न लयकारियों के सुन्दर वादन के कारण तबले ने विभिन्न वाद्यों में 'शीर्षस्थ (शीर्ष–स्थान)' प्राप्त कर लिया।

न सिर्फ गायन के शास्त्रीय पक्ष में अपितु उपशास्त्रीय पक्ष– लोक संगीत, फिल्मी–संगीत में भी तबला प्रयोग किया जाने लगा।

लोक–संगीत और फिल्मी संगीत में ढोलक, नाल, आर्गन, हारमोनियम, पैड, तबला, गिटार आदि वाद्यों का प्रयोग किया जाता है किन्तु उपर्युक्त सभी वाद्यों में तबले को छोड़कर शेष सभी

वाद्य लोक संगीत के ही वाद्य है जबकि तबला लोक–संगीत और शास्त्रीय दोनों ही श्रेणी का वाद्य है। इसका प्रमुख कारण तबले पर निकलने वाली उसकी मधुर ध्वनि ही है। जबकि तबले को छोड़कर अन्य किसी भी वाद्य को शास्त्रीय संगीत में स्थान प्राप्त नहीं है। सिर्फ लोक–संगीत में ही उनका उपयोग किया जाता है।

गायन अथवा गीत के साथ अन्य वाद्य भी संगत के रूप में प्रयोग किए जाते है किन्तु तबला वाद्य के अतिरिक्त अन्य कोई भी वाद्य यदि संगत के रूप में उपलब्ध ना हो तो एकमात्र तबला ही अपनी माधुर्य ध्वनि से संगत के रूप में प्रयुक्त होकर, उस गीत की रसानुभूति को द्विगुणित कर, उसे माधुर्य बनाता है। यही कारण है कि तबला समस्त वाद्यों में सर्वोपरि वाद्य है। तबला न सिर्फ गायन के साथ अपितु नृत्य व अन्य वाद्यों के साथ भी संगत व जुगलबन्दी के माध्यम से अधिक उपयोगी हैं। गायन की भाति नृत्य व वाद्यों में भी अपनी माधुर्य ध्वनि से उनके रसास्वादन को द्विगुणित करता है।

तबला गायन विधा में अपनी अहम भूमिका अदा करने के साथ–साथ नृत्य विधा में भी अपनी अहम भूमिका निभाता है। विशेषकर कथक नृत्य, तबले के अभाव में अपूर्ण है। तबला संगत के अभाव में कथक नृत्य प्रक्रिया पूर्ण नहीं हो सकती है। तबला संगत के अभाव में कथक नृत्य शत–प्रतिशत अधूरा है अर्थात् तबले का संगत कथक के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

इस प्रकार तबले का संगत न सिर्फ विभिन्न प्रकार की गायन–शैलियों के साथ अपितु गायन, वादन तथा नृत्य तीनों विधाओं के साथ किया जाता है। एक तबला संगतकार अपने संगत से तीनों विधाओं में स्थायित्व प्रदान करता है। भाव–निष्पत्ति में अपना योगदान प्रदान करता है और साथ ही साथ श्रोताओं को आनन्द की अनुभूति भी प्रदान करता है।

आज के वर्तमान युग में तबले का उपयोग गायन, वादन, नृत्य, लोक–संगीत, फिल्मी–संगीत, सोलो वादन आदि में खूब किया जा रहा है। प्रयोग दृष्टि के आधार पर ही इसकी लोकप्रियता बढ़ी है। जिसके परिणामस्वरूप यह सभी वाद्यों में अत्यधिक प्रचलित हो गया है। अतः तबले के सम्बन्ध में यह कहना अनुचित नहीं होगा कि 'तबला' वाद्यों में वाद्य प्रचलित अवनद्ध वाद्य है।

तबले का प्रचलन इतना अधिक है कि न सिर्फ भारत में अपितु पाश्चात्य देशों में भी तबले का अधिक प्रचार–प्रसार है। जाकिर हुसैन, स्वप्न चौधरी, नयन घोष आदि उच्च कोटि के तबला वादकों ने अपने उत्कृष्ठ व माधुर्य वादन से कई विदेशी दिलों को आकर्षित किया और तबले की माधुर्य ध्वनि ने उन्हें तबला सीखने के लिए मजबूर कर दिया। विदेशों में भी जेम्स किप्पन और जैराल्ड खुर्जियान आदि उत्कृष्ट तबला वादक मौजूद है। इस प्रकार तबला न सिर्फ भारत में अपितु पाश्चात्य देशों में भी लोकप्रिय है।

"आधुनिक काल में गायन–वादन तथा नृत्य की संगति में तबले का प्रयोग होता है। किन्तु कुछ समय पूर्व से तबले का स्वतन्त्र वादन भी अधिक लोकप्रिय होता जा रहा है।"

(राग परिचय –भाग–1, पृष्ठ –147)

जिसके परिणामस्वरूप लोगों ने तबले की शिक्षा ग्रहण करने हेतु 'भातखण्डे संगीत संस्थान', 'खैरागढ़ संगीत विश्वविद्यालय' जैसी शिक्षण–संस्थाओं में प्रवेश लेना प्रारम्भ कर दिया। फलस्वरूप संगीत के क्षेत्र में कई सोलो तबला वादकों की भी उत्पत्ति हुई। इस प्रकार न सिर्फ संगत के क्षेत्र में अपितु सोलो वादन के क्षेत्र में भी तबले का अधिक महत्व है। आज के वर्तमान युग में हजारों स्त्री–पुरुष विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में स्वतन्त्र तबला–वादन सीख रहे हैं। संगीत की विभिन्न विधाओं के साथ–साथ तबले के क्षेत्र में भी शोध कार्य किए जा रहे हैं। तबलें पर कई पुस्तकें जैसे अरविन्द मुलगावकर कृत 'तबला'; डॉ जमुना प्रसाद पटेल कृत 'तबलें की बंदिशें और विस्तार विधि' आदि कई पुस्तकें लिखी जा रही है। इतना ही नहीं तबला वादन कला रोजगार अवसर का माध्यम भी बना हुआ हैं।"

"तबले की महत्ता और लोकप्रियता के परिणामस्वरूप ही तबले के कुल छः घराने दिल्ली, अजराड़ा, लखनऊ, फर्रुखाबाद, बनारस, पंजाब और तबले के वर्णों व विभिन्न बंदिशों–पेशकार, कायदा, रेला, टुकड़ा, परन आदि का प्रादुर्भाव हुआ।"

वर्तमान समय में तबले का प्रचलन इतना अधिक बढ़ चुका है कि तबले का न सिर्फ पारम्परिक रूप अपितु तबले का इलेक्ट्रॉनिक स्वरूप भी लोगों द्वारा प्रयोग किया जा रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में नई दिशा व नवीन उपलब्धियों के लिए निरन्तर खोज जारी रहती है जिसके परिणामस्वरूप हमें नवीन तथ्यों की प्राप्ति होती है उसी खोज और अनुसंधान के परिणामस्वरूप वाद्यों के क्षेत्र में भी कुछ नवीन परिवर्तन हो रहे है जिसके फलस्वरूप वाद्यों का इलेक्ट्रॉनिक स्वरूप समक्ष प्रस्तुत हुआ। जिस प्रकार 'मूल–वाद्य–यंत्र' जन–मानस पटल पर विराजमान है अर्थात् लोकप्रिय है। उसी प्रकार वर्तमान समय में इलेक्ट्रॉनिक तबला भी **'जिसे हैन्ड सोनिक के नाम से जाना जाता है'** लोगों द्वारा खूब प्रयोग किया जा रहा है। इस प्रकार तबले का न सिर्फ पारम्परिक रूप अपितु इलेक्ट्रॉनिक रूप भी जन–मानस द्वारा खूब प्रयोग किया जा रहा है।

अन्ततः उपर्युक्त वर्णन के आधार पर तबले की लोक –प्रियता वास्तविक रूप में सिद्ध होती है कि वास्तव में 'तबला' वाद्यों में वाद्य प्रचलित अवनद्ध वाद्य है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

पुस्तक का नाम	लेखक	संस्करण	पृष्ठसंख्या
(1) राग परिचय (भाग–1)	हरिशचन्द्र श्री0	संस्करण–2018	पृष्ठ–147
(2) ताल परिचय (भाग–2)	गिरीशचन्द्र श्री0	संस्करण–2010	पृष्ठ–18–19
(3) ताल परिचय (भाग–4)	गिरीशचन्द्र श्री0	पंचम संस्करण, 2013	पृष्ठ–152
(4) भारतीय कंठ संगीत और वाद्य संगीत(गायन–वादन सुमेल)	डॉ0 अरूण मिश्रा	.....	पृष्ठ 48, 67–70
(5) संगीत विशारद	वसंत तैतीसवा	संस्करण, अक्टूबर 2020	पृष्ठ 358–359
(6) ताल वाद्य शस्त्र	मनोहर भालचन्द्र राव मराठे	.....	पृष्ठ–124
(7) ताल सर्वांग	विद्यानाथ सिंह	.....	पृष्ठ–32
(8) भारतीय संगीत वाद्य	डॉ0 लालमणि मिश्रा	.....	.....
(9) तालकोश	गिरीशचन्द्र श्री0	.....	.....
(10) गूगल, विकीपिडिया			

आधुनिक युग में अंकीय विपणन, रणनीतियाँ एवं इसकी समस्याएँ

डॉ० राजेन्द्र कुमार मिश्र
(एसोसिएट प्रोफेसर)

शोध निर्देशक
वाणिज्य विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज

संदीप कुमार तिवारी

शोधकर्त्ता
वाणिज्य विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज

सार

दुनिया एनालॉग से डिजिटल में बदल रही है और विपणन कोई अपवाद नहीं है। भारत में अंकीय विपणन का तेजी से विस्तार हो रहा है। जैसे–जैसे प्रौद्योगिकी विकास बढ़ रहा है, अंकीय विपणन, सोशल मीडिया मार्केटिंग, सर्च इंजन मार्केटिंग का उपयोग भी बढ़ रहा है। कई भारतीय कंपनियां प्रतिस्पर्धी नेतृत्व के लिए डिजिटल मार्केटिंग का उपयोग कर रही हैं। इंटरनेट उपयोगकर्ता तेजी से बढ़ रहे हैं और अंकीय विपणन ने सबसे अधिक लाभ कमाया है क्योंकि यह मुख्य रूप से इंटरनेट पर निर्भर करता है। व्यापार और निजी उपयोग दोनों के लिए इंटरनेट के व्यापक समावेश ने विज्ञापन और विपणन गतिविधियों के लिए कई नए चैनल उत्पन्न किए हैं। उपभोक्ता का खरीद व्यवहार बदल रहा है और वे पारंपरिक विपणन के बजाय अंकीय विपणन की ओर अधिक झुकाव रखते हैं। यह पेपर अंकीय विपणन के परिचय के साथ शुरू होता है और फिर यह अंकीय विपणन के माध्यमों, पारंपरिक और अंकीय विपणन के बीच अन्तर और आज के युग में अंकीय विपणन के पेशेवरों, विपक्षों और महत्व पर प्रकाश डालता है।

की–वर्ड : अंकीय विपणन; डिजिटल मीडिया; विपणन; प्रचार; डिजिटल विज्ञापन

परिचय

आधुनिक युग डिजिटल क्रान्ति का युग है। मनुष्य विकल्पों की तलाश करते हुए विपणन की दुनिया में इतना आगे निकल चुका है जहाँ असीम सम्भावनाएँ नजर आती हैं। साथ ही साथ विपणन के क्षेत्र अत्यधिक विकल्प उपलब्ध हो चुका है। वैश्विक अर्थव्यवस्था सुदृढ़ करने में विपणन महती भूमिका अदा करता है।

विपणन उन कदमों को संदर्भित करता है जो कंपनी किसी भी उत्पाद या सेवाओं की खरीद को बढ़ावा देने के लिए उठाती है। कंपनी विपणन की मदद से अपने उत्पादों या सेवाओं के लिए ग्राहकों या उपभोक्ताओं की तलाश करती है। डिजिटल मार्केटिंग डिजिटल रूप में किसी भी उत्पाद या सेवा के विपणन को संदर्भित करता है। उदाहरण के लिए, स्मार्टफोन, कंप्यूटर, लैपटॉप, टैबलेट या किसी अन्य डिजिटल उपकरणों का उपयोग करके विपणन। डिजिटल मार्केटिंग डायरेक्ट मार्केटिंग का एक रूप है जो उपभोक्ताओं को ईमेल, वेबसाइट, ऑनलाइन फ़ोरम और समाचार समूह, इंटरैक्टिव टेलीविज़न, मोबाइल संचार आदि जैसी इंटरैक्टिव तकनीकों का उपयोग करके इलेक्ट्रॉनिक रूप से विक्रेताओं के साथ जोड़ता है।

डिजिटल मार्केटिंग शब्द पहली बार 1990 के दशक में गढ़ा गया था। डिजिटल मार्केटिंग को **ऑनलाइन मार्केटिंग**, **इंटरनेट मार्केटिंग**, या **वेब मार्केटिंग** के रूप में भी जाना जाता है। इसे **इंटरनेट मार्केटिंग** के रूप में जाना जाता है क्योंकि इंटरनेट के उदय के साथ डिजिटल मार्केटिंग की उच्च वृद्धि भी है। डिजिटल मार्केटिंग का प्रमुख लाभ यह है कि विपणक अपने उत्पादों या सेवाओं को 24 घंटे और 365 दिनों, कम लागत, दक्षता लाभ, ग्राहक को अधिक खरीद के लिए प्रेरित करने और ग्राहक सेवाओं में सुधार करने के लिए बेच सकते हैं। यह कनेक्टिविटी की अत्यधिक डिग्री के कारण कई संचारों में मदद करता है और आम तौर पर सेवाओं या उत्पादों को समय पर, प्रासंगिक, गैर–सार्वजनिक और लागत–शक्तिशाली तरीके से बेचने के लिए पूरा होता है।

2005 में, लगभग 1.1 बिलियन इंटरनेट उपयोगकर्ता थे, जिसमें उस समय की आबादी का 16.6 प्रतिशत शामिल था। 2020 में, इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या लगभग 4.8 बिलियन है और प्रतिशत जनसंख्या बढ़कर 62 प्रतिशत हो गई है। और डिजिटल मार्केटिंग और इंटरनेट के बीच सीधा संबंध है। भारत और चीन जैसे देशों में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या सबसे अधिक है इसलिए उनके पास एक शानदार अवसर है।

डिजिटल मार्केटिंग के विभिन्न चैनल

डिजिटल मार्केटिंग में विभिन्न चैनल होते हैं जो विपणक द्वारा अपने उत्पादों या सेवाओं को बढ़ावा देने के लिए उपयोग किए जाने वाले माध्यम होते हैं। एक विज्ञापनदाता के रूप में, मुख्य उद्देश्य उस चैनल का चयन करना है जो संचार के लिए सबसे अच्छा है और निवेश पर अधिकतम रिटर्न देता है। महत्वपूर्ण डिजिटल मार्केटिंग चैनलों की सूची नीचे दी गई है:

सामाजिक मीडिया विपणन

वर्तमान युग में, सोशल मीडिया मार्केटिंग डिजिटल मार्केटिंग में सबसे महत्वपूर्ण मीडिया में से एक है। यह सबसे तेजी से बढ़ने वाला डिजिटल चैनल है। सोशल मीडिया मार्केटिंग सोशल मीडिया साइटों के माध्यम से ट्रैफ़िक या साइटों को प्राप्त करने की प्रक्रिया है। नील पटेल के

अनुसार, सोशल मीडिया मार्केटिंग सामग्री बनाने की प्रक्रिया है जिसे आपने उपयोगकर्ता जुड़ाव और साझाकरण को चलाने के लिए प्रत्येक सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के संदर्भ के अनुरूप बनाया है। जनसंख्या के हिसाब से इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या 15 वर्षों में 16.6 से बढ़कर 62 प्रतिशत हो गई है और इसमें सोशल मीडिया मार्केटिंग को सबसे अधिक लाभ हुआ है।

अंकीय विपणन, सोशल मीडिया मार्केटिंग, सर्च इंजन मार्केटिंग का उपयोग भी बढ़ रहा है। भारतीय कंपनियां प्रतिस्पर्धी नेतृत्व के लिए डिजिटल मार्केटिंग का उपयोग कर रही हैं।

व्यापार और निजी उपयोग दोनों के लिए इंटरनेट के व्यापक समावेश ने विज्ञापन और विपणन गतिविधियों के लिए कई नए चैनल उत्पन्न किए हैं। उपभोक्ता का खरीद व्यवहार बदल रहा है और वे पारंपरिक विपणन के बजाय अंकीय विपणन की ओर अधिक झुकाव रखते हैं।

इस प्रकार की मार्केटिंग रणनीति में, सोशल मीडिया आउटलेट्स जैसे

Facebook,Twitter, Google+, Pinterest और Instagram की मदद से व्यवसाय को बढ़ावा दिया जाता है। यह प्रत्येक साइट पर व्यवसाय के लिए एक समर्पित पृष्ठ बनाकर काम करता है और ऐसी सामग्री विकसित करता है जो अनुयायियों को आकर्षित करती है जो अंततः भुगतान करने वाले ग्राहकों में परिवर्तित हो जाती है।

एफिलेट मार्केटिंग

इस प्रकार का विपणन उन व्यवसायों का उपयोग करता है जो अपनी वेबसाइटों पर अपने उत्पादों/सेवाओं को बढ़ावा देने के लिए व्यक्तियों या कंपनियों को भुगतान कर रहे हैं। इस प्रकार के विपणन में आमतौर पर किसी अन्य साइट पर एक बैनर विज्ञापन डालना शामिल होता है, जिसमें मेजबानों को ग्राहकों की संख्या के आधार पर भुगतान किया जाता है जो किसी विशेष विज्ञापन पर क्लिक करते हैं और खरीदारी ऑनलाइन करते हैं।

दृश्य विज्ञापन

यह ऑनलाइन विज्ञापन माध्यमों के सबसे सामान्य प्रकारों में से एक है। यह सहबद्ध विपणन के समान है जहां व्यापार के उत्पादों/सेवाओं में रुचि रखने वाले आगंतुकों के लिए बैनर विज्ञापन अन्य वेबसाइटों पर रखे जाते हैं। प्रदर्शन विज्ञापन निश्चित सीमा में हो सकते हैं और इसमें वीडियो और ऑडियो शामिल हो सकते हैं।

ई–मेल विपणन

ईमेल मार्केटिंग डायरेक्ट मेल का एक ऑनलाइन संस्करण है। इसमें ग्राहक को हैंडआउट या विज्ञापन भेजने के बजाय, यह एक फॉर्म प्रकार प्रदर्शित करता है जो व्यवसायों को ईमेल की मदद से समान जानकारी या उससे भी अधिक जानकारी भेजने की अनुमति देता है। इस प्रकार

के विपणन में व्यापार कूपन, समाचार पत्र, विशेष आयोजनों के निमंत्रण और सर्वेक्षण शामिल होंगे।

इनबाउंड विपणन

इस प्रकार की मार्केटिंग में नए ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए ब्लॉग, सोशल मीडिया और पॉडकास्ट जैसी ऑनलाइन सामग्री का उपयोग किया जाता है। इस रणनीति का विचार यह है कि यह व्यवसायों के इर्द–गिर्द घूमती है जो अपनी स्वयं की सामग्री बनाते हैं जो दुकानदारों का ध्यान आकर्षित करती है। एक बार प्रवेश करने के बाद, व्यवसाय प्रत्येक आगंतुक की आवश्यकताओं के अनुसार अपना संदेश बनाना शुरू कर सकते हैं।

भुगतान–प्रति–क्लिक विज्ञापन

इसे सर्च इंजन मार्केटिंग के रूप में जाना जाता है, जो विज्ञापन है जिसमें व्यवसाय Google और Yahoo जैसी खोज इंजन वेबसाइटों पर विज्ञापन देते हैं। इन विज्ञापनों को विशेष शीर्ष या साइड पैनल में रखा जाता है जो सशुल्क विज्ञापनों के लिए अलग किए जाते हैं। यह देखा गया है कि कई खोज इंजन व्यवसायों को अपने पृष्ठों पर विज्ञापन स्थान पर बोली लगाने का अवसर प्रदान करते हैं। इसमें वह व्यवसाय स्थान प्राप्त करता है जो प्रत्येक बार किसी इंटरनेट उपयोगकर्ता द्वारा विज्ञापन पर क्लिक करने पर अधिकतम भुगतान करने को तैयार होता है।

सर्च इंजन अनुकूलन (SCO)

यह विज्ञापन का एक निःशुल्क रूप है जिसे सर्च इंजन पर व्यवसायों की रैंकिंग बढ़ाने के लिए डिज़ाइन किया गया है। यह देखा गया है कि, व्यवसाय की रैंकिंग जितनी अधिक होती है, इंटरनेट उपयोगकर्ता द्वारा व्यवसाय या उससे मिलती–जुलती किसी चीज़ की खोज करने पर परिणामों को शीर्ष पर प्रदर्शित करने की संभावना अधिक होती है।

अंकीय विपणन का महत्व

उपरोक्त के आधार पर डिजिटल मार्केटिंग के महत्व का सारांश जो प्रत्येक विपणक को अपनाना चाहिए उसे निम्नलिखित ढंग से वर्णित किया जा सकता है –

- इंटरनेट मार्केटिंग किसी भी ऑफ़लाइन मार्केटिंग तकनीकों की तुलना में अंतहीन रूप से अधिक मॉडरेट है। यह व्यापक दर्शकों तक आसानी से पहुँच सकता है।
- डिजिटल मार्केटिंग में विभिन्न ट्रैकिंग सॉफ्टवेयर की मदद से परिणामों का आसानी से पालन और निगरानी की जा सकती है। महँगे ग्राहक अनुसंधान का नेतृत्व करने के बजाय, संगठन तेजी से ग्राहक प्रतिक्रिया दर देख सकते हैंऔर अपने प्रचार प्रयासों की

उपलब्धि को लगातार माप सकते हैं, जिससे उन्हें अगले एक के लिए और अधिक पर्याप्त रूप से डिजाइन करने में मदद मिलती है।

- टीवी, रेडियो या बिलबोर्ड जैसे पारंपरिक मार्केटिंग माध्यमों की तुलना में ग्राहकों से प्रतिक्रिया एकत्र करना आसान है। वे ऑनलाइन मार्केटिंग में एक वेबसाइट का उपयोग करके आसानी से किसी भी उत्पाद पर प्रतिक्रिया दे सकते हैं जो एक व्यवसायी को अपने विशिष्ट डोमेन में खुद को फिर से डिज़ाइन करने में मदद करता है।
- यह वेब या पोर्टेबल जैसे ऑनलाइन माध्यम से एक व्यवसाय को आगे बढ़ाने में मदद करता है और बाद में एक सेकंड में बड़ी संख्या में ग्राहकों तक पहुंचता है। कई छोटे और बड़े संगठन विश्व स्तर पर खुद को अंडरराइट करने के लिए वेब–आधारित शोकेसिंग के तरीकों का पालन कर रहे हैं।
- डिजिटल विज्ञापनदाता चीजों की जांच करते हैं जैसे कि क्या देखा जा रहा है, कितनी बार और कितनी देर तक, कौन सा पदार्थ काम करता है और क्या काम नहीं करता है, और भी इसी तरह देखता है जबकि इंटरनेट शायद सबसे मजबूती से डिजिटल मार्केटिंग से जुड़ा चैनल है, अन्य में दूरस्थ सामग्री सूचना, पोर्टेबल एप्लिकेशन, उन्नत टीवी और रेडियो चैनल शामिल हैं।
- डिजिटल मार्केटिंग मध्यम, लक्षित और मात्रात्मक है और इस प्रकार संगठन इसे करते हैं और विज्ञापनदाता इसे पसंद करते हैं।

अंकीय विपणन की समस्याएं

आज डिजिटल क्रान्ति के युग में हमें अपनी एक आँख धन प्रबन्धन तथा दूसरी विपणन एवं अर्थव्यवस्था पर रखनी चाहिए। इस युग को प्रतियोगिता का युग भी कहा जा सकता है क्योंकि हमारे पास विकल्प के रूप में एक ही उत्पाद के अनेकों इकाइयाँ उपलब्ध होती हैं। यदि किसी उत्पाद का विपणन करना है तो सर्वप्रथम हमें बाजार के स्वरूप का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है। यदि हम उत्पाद से सम्बन्धित बाजार का अध्ययन किए बिना विपणन प्रारम्भ करते हैं तो हमें अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। आज हमारे पास विपणन के अनेकों विकल्प एवं प्लेटफार्म उपलब्ध हैं। ई–विपणन एवं अंकीय विपणन तेजी से पूरे बाजार पर अपना प्रभाव स्थापित कर चुका है जो लोगों को उनकी पसन्द की सेवाएँ एवं उत्पाद आसानी से उपलब्ध करवा रहा है और लोगों को सन्तुष्ट कर रहा है।

उत्पादों और सेवाओं को बढ़ावा देने के लिए डिजिटल मार्केटिंग का उपयोग करने के कई फायदे हैं फिर भी एक डिजिटल मार्केटर को कुछ चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कठिनाइयाँ इस प्रकार हैंः

- उपभोक्ता विभिन्न डिजिटल उपकरणों और विभिन्न डिजिटल चैनलों का उपयोग करते हैं और उन उपकरणों में विभिन्न डिजिटल चैनल होते हैं जो डिजिटल चैनलों के प्रसार की ओर ले जाते हैं। और विपणक को माध्यम और दर्शक चुनने में कठिनाई होती है।
- पारंपरिक मार्केटिंग की तुलना में डिजिटल मार्केटिंग बेहद सस्ती है और यह हर छोटे व्यवसाय को कवर करती है जिससे तीव्र प्रतिस्पर्धा होती है।
- उपभोक्ता जब भी चैनल पर जाते हैं तो डिजिटल चैनलों में भारी मात्रा में डेटा छोड़ जाते हैं। इस तरह के डेटा को समझना आश्चर्यजनक रूप से कठिन है, साथ ही विस्फोटक डेटा वॉल्यूम के अंदर सही डेटा का पता लगाएं जो आपको सही विकल्प बनाने में मदद कर सकता है।

अंकीय विपणन के विभिन्न घटक और रणनीतियाँ

आधुनिक व्यापार रणनीति के लिए इंटरनेट के महत्व को माइकल पोर्टर (2001) द्वारा रेखांकित किया गया था, जिन्होंने प्रसिद्ध रूप से कहा था–

मुख्य सवाल यह नहीं है कि इंटरनेट प्रौद्योगिकी को तैनात करना है या नहीं – कंपनियों के पास कोई विकल्प नहीं है यदि वे प्रतिस्पर्धी रहना चाहते हैं – लेकिन इसे कैसे तैनात किया जाए।

एक संगठन की ऑनलाइन मार्केटिंग गतिविधियों के लिए लगातार दिशा प्रदान करने के लिए एक डिजिटल मार्केटिंग रणनीति की आवश्यकता होती है ताकि वे इसकी अन्य विपणन गतिविधियों के साथ एकीकृत हों और इसके समग्र व्यावसायिक उद्देश्यों का समर्थन करें। डिजिटल मार्केटिंग रणनीति में पारंपरिक विपणन रणनीतियों के विशिष्ट उद्देश्यों के लिए कई समानताएं हैं, जिसमें यह होगा–

- डिजिटल मार्केटिंग गतिविधियों के लिए भविष्य की दिशा प्रदान करना;
- रणनीति को सूचित करने के लिए संगठन के बाहरी वातावरण, आंतरिक संसाधनों और क्षमताओं का विश्लेषण शामिल है;
- डिजिटल मार्केटिंग उद्देश्यों को परिभाषित करें जो विपणन उद्देश्यों का समर्थन करते हैं;
- डिजिटल विपणन उद्देश्यों को प्राप्त करने और स्थायी अंतर प्रतिस्पर्धी लाभ बनाने के लिए रणनीतिक विकल्पों का चयन शामिल है;
- विशिष्ट विपणन रणनीति विकल्पों जैसे लक्ष्य बाजार, स्थिति और विपणन मिश्रण के विनिर्देश को संबोधित करने के लिए रणनीति तैयार करना शामिल है;
- यह पहचानने में मदद करें कि किन रणनीतियों को आगे नहीं बढ़ाना है और कौन सी विपणन रणनीति लागू करने में सक्षम नहीं हैं;

- निर्दिष्ट करें कि संसाधनों को कैसे तैनात किया जाएगा और रणनीति को प्राप्त करने के लिए संगठन को कैसे संरचित किया जाएगा।

एक चैनल विपणन रणनीति के रूप में डिजिटल विपणन रणनीति

डिजिटल मार्केटिंग रणनीति मुख्य रूप से एक चैनल मार्केटिंग रणनीति है जो परिभाषित करती है कि किसी कंपनी को चैनल–विशिष्ट उद्देश्यों को कैसे निर्धारित करना चाहिए और चैनल की विशेषताओं और अंतिम उपयोगकर्ता आवश्यकताओं के अनुरूप एक अंतर चैनल प्रस्ताव और चैनल–विशिष्ट संचार विकसित करना चाहिए।

ध्यान दें कि डिजिटल चैनल रणनीति के दो घटक हैं – कई इसे केवल डिजिटल संचार रणनीति के रूप में देख सकते हैं, लेकिन इसे उत्पाद, मूल्य निर्धारण, स्थान, प्रचार और ग्राहक सेवा में परिवर्तन सहित डिजिटल चैनल द्वारा सक्षम प्रस्ताव में परिवर्तन को भी परिभाषित करना चाहिए।

डिजिटल रणनीति अन्य संचार चैनलों के सापेक्ष डिजिटल चैनलों के रणनीतिक महत्व को निर्धारित करती है जिनका उपयोग विभिन्न ग्राहक टचपॉइंट पर ग्राहकों के साथ सीधे संवाद करने के लिए किया जाता है। कुछ संगठन, जैसे कि कम लागत वाली एयरलाइंस, सेवाओं को वितरित करने और ग्राहकों के साथ संवाद करने के लिए वेबसाइटों और ईमेल मार्केटिंग जैसे आभासी चैनलों का उपयोग करते हैं, जबकि अन्य एक रणनीति का पालन कर सकते हैं जो डिजिटल और ऑफलाइन चैनलों के मिश्रण का उपयोग करता है– उदाहरण के लिए, खुदरा विक्रेता जो आमने–सामने, टेलीफोन, मोबाइल, प्रत्यक्ष मेल संचार और वेब का उपयोग करते हैं। हम देखते हैं कि (अनुसंधान ऑनलाइन–खरीद ऑफलाइन) व्यवहार और **क्लिक–एंड–कलेक्ट** सेवाएं महत्वपूर्ण बनी हुई हैं।

इसलिए डिजिटल मार्केटिंग रणनीति का फोकस मौजूदा मार्केटिंग रणनीतियों का समर्थन करने के लिए चैनल का उपयोग करने के तरीके के बारे में निर्णय है, इसकी ताकत का फायदा कैसे उठाया जाए और इसकी कमजोरियों का प्रबंधन कैसे किया जाए, और मल्टीचैनल मार्केटिंग रणनीति के हिस्से के रूप में अन्य चैनलों के साथ संयोजन में इसका उपयोग किया जाए। यह मल्टीचैनल मार्केटिंग रणनीति परिभाषित करती है कि विभिन्न मार्केटिंग चैनलों को ग्राहक और कंपनी के लिए उनके सापेक्ष गुणों के आधार पर अपने प्रस्ताव विकास और संचार के संदर्भ में एक–दूसरे को कैसे एकीकृत और समर्थन करना चाहिए। दरअसल, यूनिलीवर में संचार प्रमुख कीथ वीड ने भविष्यवाणी की है कि ओमनी–कनेक्टिविटी एक प्रमुख प्रौद्योगिकी प्रवृत्ति है और सुझाव देता है कि भविष्य में कनेक्शन न केवल कंप्यूटर, फोन और टैबलेट के बीच होंगे, बल्कि घरेलू उपकरण, हीटिंग नियंत्रण, स्मार्ट घड़ियां और स्वास्थ्य मॉनिटर भी होंगे।

पारंपरिक विपणन और डिजिटल विपणन

पारंपरिक विपणन विपणन का सबसे पहचानने योग्य रूप है। ज्यादातर लोग इसकी दीर्घायु के कारण पारंपरिक विपणन के आदी हैं। पारंपरिक विपणन के कुछ उदाहरणों में एक अखबार या पत्रिका में विज्ञापन जैसे मूर्त आइटम शामिल हैं। इसमें एक बिलबोर्ड, ब्रोशर, टीवी या रेडियो पर विज्ञापन, पोस्टर आदि भी शामिल हैं। यह विपणन का एक गैर–डिजिटल तरीका है। जबकि डिजिटल मार्केटिंग ग्राहकों तक पहुंचने के लिए विभिन्न डिजिटल चैनलों का उपयोग करती है। कुछ तुलनाएं नीचे दी गई हैं:

पारंपरिक विपणन	डिजिटल मार्केटिंग
पारंपरिक विपणन के उदाहरण में एक पोस्टर, ब्रोशर, पत्रिका, समाचार पत्र, प्रसारण, टेलीफोन शामिल हैं	डिजिटल मार्केटिंग के उदाहरण में एक वेबसाइट, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म, एफिलेट मार्केटिंग, ईमेल मार्केटिंग, सर्च इंजन ऑप्टिमाइज़ेशन शामिल हैं
एक पारंपरिक विपणन दृष्टिकोण के साथ, केवल सीमित या स्थानीय ग्राहक को लक्षित किया जा सकता है	डिजिटल मार्केटिंग दृष्टिकोण के साथ दुनिया भर के ग्राहक को लक्षित किया जा सकता है
विज्ञापन अभियान को योजना बनाने में लंबा समय लगता है	विज्ञापन अभियान को योजना बनाने में थोड़ी अवधि लगती है
यह महंगा और समय लेने वाला है	यह अपेक्षाकृत सस्ता और तेज है
माल को व्यक्त करते समय एक शारीरिक संबंध को आकार दिया जाता है	डिजिटल मार्केटिंग की डिजिटल प्रकृति के कारण कोई शारीरिक संबंध नहीं बनता है
एक अभियान लंबे समय तक रहता है और परिवर्तन महंगा है	एक अभियान को बहुत आसानी से बदला जा सकता है
उत्पाद पोस्टर, कागज, बिलबोर्ड के प्रचार के लिए कई विभिन्न प्रकार की सामग्री का उपयोग किया जाता है	कोई भौतिक सामान की आवश्यकता नहीं है क्योंकि डिजिटल मार्केटिंग वेबसाइट, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म या ऑनलाइन वीडियो के माध्यम से की जाती है
पारंपरिक विपणन की भौतिक प्रकृति के कारण, इसकी लागत अधिक है	डिजिटल मार्केटिंग पारंपरिक मार्केटिंग की तुलना में सस्ता है क्योंकि यह वेबसाइटों और सोशल मीडिया पर किया जाता है
बाजार विश्लेषण के लिए पारंपरिक विपणन सर्वेक्षण या प्रयोग पर निर्भर करता है, परिणाम	विभिन्न विश्लेषणात्मक उपकरणों पर उपलब्ध तथ्य और डेटा डेटा का विश्लेषण करना और

का विश्लेषण करना जटिल है और सटीक डेटा प्रदान नहीं करता है	इसकी व्याख्या करना बहुत सुविधाजनक बनाते हैं
24/7 विपणन संभव नहीं है	दुनिया भर में 24/7 विपणन संभव है
केवल एक तरफ़ा संचार हो सकता है	दो–तरफा संचार हो सकता है
वायरल होने की क्षमता नहीं	वायरल होने की क्षमता
ग्राहक केवल काम के समय के दौरान प्रतिक्रिया दे सकता है	ग्राहक किसी भी समय प्रतिक्रिया दे सकते हैं

अंकीय विपणन के गुण

प्रौद्योगिकी तेजी से बदल रही है और इसने उपभोक्ता के खरीदारी व्यवहार को भी प्रभावित किया है। नीचे कुछ फायदे दिए गए हैं जो डिजिटल मार्केटिंग से उपभोक्ता को मिलते हैं:

- साल 2020 में उपभोक्ता दुनिया में किसी भी जगह से कभी भी इंटरनेट एक्सेस कर सकते हैं। और डिजिटल मार्केटिंग की डिजिटल प्रकृति के कारण उपभोक्ता किसी भी उत्पाद या सेवा के बारे में 24/7 बार अपडेट रह सकते हैं।
- इंटरनेट के कारण उपभोक्ता विभिन्न गतिविधियाँ कर सकता है जैसे कंपनी की वेबसाइट पर जाना, जानकारी पढ़ना, उत्पाद खरीदना आदि। इससे उपभोक्ताओं का जुड़ाव बढ़ा है और उनके अनुभव में सुधार हुआ है।
- पारंपरिक विपणन में इस बात की बहुत कम संभावना होती है कि विपणक द्वारा उपभोक्ताओं को गलत जानकारी दी जा सकती है, लेकिन डिजिटल मार्केटिंग में उपभोक्ताओं को किसी भी उत्पाद या सेवा के बारे में स्पष्ट और सटीक जानकारी मिलती है। और इंटरनेट संपूर्ण आइटम डेटा देता है जिस पर ग्राहक निर्भर हो सकते हैं और खरीद विकल्प पर व्यवस्थित हो सकते हैं।
- कई अलग–अलग कम्पनियां डिजिटल मार्केटिंग के माध्यम से अपने उत्पादों का प्रचार करती हैं, इसलिए उपभोक्ता के लिए विभिन्न कंपनियों के उत्पादों की तुलना करना सुविधाजनक हो जाता है। उत्पादों की तुलना करने के लिए उन्हें विभिन्न खुदरा स्टोरों पर जाने की आवश्यकता नहीं है।
- इंटरनेट पूरे दिन उपलब्ध रहता है इसलिए समय की कोई पाबंदी नहीं है और ग्राहक किसी भी समय उत्पाद खरीद सकते हैं।
- डिजिटल माध्यम के कारण दर्शक उत्पादों या सेवाओं के बारे में जानकारी और विशेषताओं को दूसरों के साथ साझा कर सकते हैं।

- संगठन डिजिटल चैनलों के माध्यम से वस्तुओं की कीमतों को दिखाता है और इससे उपभोक्ता के लिए लागत बेहद समझ में आती है और सीधी होती है। कंपनी छूट देने के लिए किसी भी छुट्टी या त्योहार पर अपनी कीमतों में बदलाव भी करती है और उपभोक्ता के लिए बहुत पारदर्शी है।

पारंपरिक विपणन में पहले उपभोक्ता पोस्टर, टीवी या किसी पारंपरिक तरीके से विज्ञापन देखते हैं और उन्हें खरीदने के लिए खुदरा स्टोर पर जाते हैं। लेकिन डिजिटल मार्केटिंग में जब उपभोक्ता विज्ञापन देखते हैं तो वे डिजिटल मीडिया के माध्यम से तुरंत उत्पाद खरीद सकते हैं।

अंकीय विपणन के दोष

आज के युग में डिजिटल मार्केटिंग के कई फायदे हैं हालांकि इसके कुछ नुकसान भी हैं जिनकी चर्चा नीचे की गई है:

- एक प्रतियोगी दूसरों के डिजिटल मार्केटिंग अभियान को आसानी से कॉपी कर सकता है। ग्राहकों को ठगने के लिए ब्रांड नाम या लोगो का इस्तेमाल किया जा सकता है।
- यदि इंटरनेट कनेक्शन धीमा है या वेबसाइटों में कुछ समस्या है, तो वेबसाइटों को खुलने में बहुत अधिक समय लग सकता है और ग्राहक ज्यादा इंतजार नहीं करेगा और चला जाएगा।
- पारंपरिक विपणन में, ग्राहक सत्यापित करने के लिए उत्पादों को भौतिक रूप से छू सकते हैं लेकिन ई–कॉमर्स में यह संभव नहीं है।
- हालांकि भारत डिजिटलीकरण कर रहा है, फिर भी कई ग्राहक ऑनलाइन भुगतान प्रणाली पर भरोसा नहीं करते हैं या नहीं जानते।
- आभासी प्रगति से संबंधित भारी संख्या में नकली होने के कारण ग्राहकों के भरोसे की कमी। निष्पक्ष संगठन प्रभावित हो सकते हैं क्योंकि उनकी छवि और मूल्य की प्रतिष्ठा को नुकसान हो सकता है।
- ऐसे कई मामले हैं जब उपयोगकर्ताओं ने नकली आईडी का उपयोग करके खरीदने के इरादे से भुगतान वितरण पद्धति के माध्यम से उत्पादों का ऑर्डर दिया। यह डिलीवरी पद्धति पर भुगतान की खामियों को दर्शाता है।
- डिजिटल मार्केटिंग पूरी तरह से इंटरनेट/तकनीक पर निर्भर है जिससे गलतियां हो सकती हैं।
- डिजिटल मार्केटिंग अभी तक सभी व्यक्तियों द्वारा समझ में नहीं आई हैरू कुछ ग्राहक, विशेष रूप से अधिक स्थापित लोग कम्प्यूटरीकृत वातावरण में विश्वास नहीं करते हैं, पारंपरिक रणनीतियों का उपयोग करना चाहते हैं।

निष्कर्ष

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि दुनिया तेजी से सरल से डिजिटल दुनिया की ओर बढ़ रही है। लोग ऑनलाइन सामग्री में अधिक निवेश कर रहे हैं और कंपनियों को अपनी विज्ञापन रणनीति में इस तथ्य को पचाने में कठिनाई हो रही है, उन्हें जल्दी से समायोजित करने की आवश्यकता है। लोग हर साल जितना अधिक समय इंटरनेट पर बिताते हैं, उतने ही अधिक डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग वे अपने जीवन में एक सतत–विकासशील कार्य करते हैं। डिजिटल इंडिया का मुख्य उद्देश्य डिजिटल माध्यम को बढ़ावा देना है। क्योंकि लोग दुनिया से कहीं भी कभी भी डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग कर सकते हैं, कंपनियों को अपनी मार्केटिंग रणनीति को पारंपरिक से डिजिटल में बदलने की जरूरत है। यदि कंपनियां अपने उत्पादों और सेवाओं का विज्ञापन करने के लिए डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग नहीं करती हैं तो वे प्रतिस्पर्धियों के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकती हैं और अंततः बंद हो जाएंगी।

जब ग्राहक किसी भी उत्पाद को ऑनलाइन खरीदना चाहते हैं, तो वे आसानी से उत्पाद की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और किसी खुदरा स्टोर या शॉपिंग मॉल में जाए बिना अन्य उत्पादों के साथ तुलना कर सकते हैं। इससे पता चलता है कि उपभोक्ता खुदरा स्टोर पर जाने के बजाय ऑनलाइन खरीदारी के प्रति अधिक इच्छुक हैं। जैसा कि उपभोक्ता का खरीदारी व्यवहार बदल रहा है, कंपनियों को भी अपनी विज्ञापन रणनीति बदलने और मार्केटिंग के लिए डिजिटल प्लेटफॉर्म अपनाने की जरूरत है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

- Bala M., Verma D. "A Critical review of Digital Marketing," www.ijmrs.us,
- Chaffey, D. and Ellis-Chadwick, F. (2012). Digital Marketing: Strategy, Implementation and Practice. 1st ed. Harlow: Pearson Education.
- Dahiya R., "A Research Paper on Digital Marketing Communication and Consumer Buying Decision Process: An Empirical Study in the Indian Passenger Car Market", Journal of Global Marketing 31(2):1- 23, September 2017.
- Elizabeth S. B, "Digital Marketing", February 2011, webservices.itcs.umich.edu/.
- French, A. and Smith, G. (2013). Measuring brand association strength: a consumer based brand equity approach. European Journal of Marketing, 47(8), pp.1356-1367.
- https://digitalmarketinginstitute.com/
- https://en.wikipedia.org/wiki/Digital_marketing
- https://mailchimp.com/marketing-glossary/digital-marketing
- Marr, B. (2012). Key performance indicators. 1st ed. Harlow, England; New York: Pearson Financial Times Pub.
- McCarthy, E. J. (1964), Basic Marketing, Richard D. Irwin, Homewood, IL.

- Mercer, D. (1999). Marketing. 1st ed. Oxford [u. a.]: Blackwell.
- Ryan, D. (2014). Understanding Digital Marketing: Marketing Strategies for Engaging the Digital Generation Ed. 3. 1st ed. Kogan Page.

संत कवि कबीर की सामाजिक चेतना

डॉ0 अल्ताफ
(एसोसिएट प्रोफेसर)

शोध निर्देशक
हिन्दी विभाग
शिब्ली नेशनल पी0जी0 कॉलेज, आजमगढ़
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

मयंक तिवारी

शोधार्थी (हिन्दी)
शिब्ली नेशनल पी0जी0 कॉलेज, आजमगढ़
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

निर्गुण काव्यधारा के महान कवि कबीर दास का भक्तिकाल में सर्वोच्च स्थान है। भारत भूमि अनेक रत्नों की खान रही है। उन्हीं महान रत्नों में एक थे संत कबीर। कबीर की भाषा सधुक्कड़ी की तथा उसी भाषा में कबीर समाज में व्याप्त अनेक रूढ़ियों का खुलकर विरोध किया है।

तत्कालीन समाज में हिन्दुओं की तीर्थ–यात्रा एवं मुसलमानों की हज यात्रा भी प्रचलित थी। समाज में अनेक दुष्कर्म करके भी लोग तीर्थ या हज करके पापों से पूरी तरह निवृत्त मान बैठते थे। इससे लोग मोक्ष की प्राप्ति का भी अनुभव करते थे। लोगों की मान्यता थी कि किसी भी तीर्थ पर जाकर वहाँ स्नान ध्यान करने से पुण्य की प्राप्ति होती है। संत कवि इस आडम्बर से ऊब चुके थे। कबीर यह देखकर आश्चर्य व्यक्त करते हैं, कि लोगों ने मुक्ति को इतना सस्ता समझ रखा है और पानी में नहाकर और राम–नाम को रटकर ही उसे उड़ा लेना चाहते हैं। ऐसे प्रश्नों की निरर्थकता पर कबीर कह उठते हैं–

'तीरथ करि–करि जग मुवा, हूँधै पाँणी न्हाइ।
रामहि राम जपंतडाँ, काल घसीट्यों जाइ।।'

संत कवियों का विचार था कि जिस प्रकार ब्रह्म शरीर के भीतर है, वैसे ही तीर्थ भी शरीर के भीतर है। अपने शरीर के अंदर स्थित मनःस्थितियों को पवित्र रखना ही तीर्थ के समान है। रवीन्द्र कुमार सिंह के अनुसार 'भला यह कैसे उपहास की बात थी। वास्तव में, तीर्थाटन तो

विषैली लता के समान है जिसका न कोई मूल है और जिसमें न कोई सार है। यदि मन में सच्चाई नहीं है और ह्रदय में वासना की अग्नि धधक रही है, तो तीर्थाटन से कुछ नहीं होगा।'

संत कवियों ने तीर्थ–यात्रा को जीवन के विरुद्ध माना है। संतों द्वारा धर्म के ठेकेदार के पद पर कब्जा जमाए पुजारियों और पंडों पर कड़ा प्रहार किया गया है। संतों ने घूम–घूमकर तीर्थ यात्रा के विरुद्ध प्रचार किया। रविन्द्र कुमार सिंह का मत है कि–'कवियों ने तीर्थ–यात्रा के विरुद्ध जो उपदेश दिए हैं, उसके कुछ अन्य कारण भी थे। उस समय यातायात की कठिनाई के साथ–साथ देश में परिव्याप्त दीनता और अराजकता के कारण स्थान–स्थान पर लूट–मार होने लगी थी। मुस्लिम बादशाहों की धर्मान्धता के कारण भी यात्रियों को पीड़ित किया जाता था।' इसीलिए संत कवियों ने गृहस्थी में रहकर ही ईश्वर उपासना करने के नियम को बताया। जब ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है, केवल तीर्थ–यात्रा तक सीमित नहीं है, तो यहाँ–वहाँ भटकने की आवश्यकता ही क्या है? यदि तीर्थ स्थान के बाद भी मन की अपवित्रता बनी रहे, तो इसका क्या लाभ हुआ? यदि तीर्थ–यात्रा के बाद भी वही सामान्य मृत्यु का ग्रास बनना है तो यह सब व्यर्थ है–

'जोगी जती तपी संन्यासी बहु तीरथ भ्रमना।
लुंजित मुंजित मौनि जटा धरि अंत तऊमरना।।'

जो व्यर्थ तीर्थ–यात्रा को जाते हैं, ऐसे लोगों को संत दादू दयाल कहते हैं कि शरीर के द्वारा किये गये कर्मों को धोने के लिए तुम पवित्र तीर्थ–स्थानों पर जाया करते हो, किन्तु जो कर्म तुम वहां करते हो, उसे कहाँ धोओगे–

'काया कर्म लगाइ करि, तीरथ धोवै आइ।
तीरथ माह कीजिये, सो कैसे करि जाइ।।'

तीर्थाटन में तल्लीन व्यक्ति को कभी स्वर्ग का ज्ञान नहीं हो सकता। यदि देखा जाय तो सच्चा स्नान गुरु की सेवा है। गुरुनानक देव ने तो स्पष्ट रूप से कह दिया है कि कठोर तप, दया आदि करने वाले को तो भले ही थोड़ा पुण्य मिल जाए, परन्तु प्रभु के नाम का एक कण भी उसके लिए अधिक श्रेयस्कर है। नानक कहते हैं–

:तीरथ तपु दड़िआ दतु दानु। जे को पावै तिल का मानु ।।
सुणिआ मनिआ मनि कीता भाउ ।। अंतरगति तीरथि मलि नाउ।।'

मध्ययुगीन समाज में बहुप्रचलित उपासना रूपों में मूर्ति–पूजा का स्थान प्रमुख था। मुल्ला और पंडितों ने ईश्वर को मंदिर–मस्जिद व मूर्तियों तक सीमित कर दिया था। ऐसी स्थिति में संतों ने जनता को इस वाह्याडम्बर से दूर रहने की सलाह दी। संतों का स्पष्ट मत था कि पत्थर की पूजा निरर्थक है। पत्थर को पूजने से भला ईश्वर कैसे मिल सकता? डॉ. केशनीप्रसाद चौरसिया के मतानुसार– ''संतकालीन समाज की धार्मिक भावनाएँ रूढ़ और परम्परागत रहीं।

सामान्य जनता विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों में फंसकर हीन जीवन बिता रही थी। विजातीय धर्म परिवर्तन के बाद भी संस्कार ज्यों के त्यों बने रहे। अंधविश्वास एवं झाड़–फूंक आदि चमत्कारों के प्रति ममता शेष रही। अतः संतों ने मुसलमानों के रोजा, नमाज, हज, ताजिएदारी और हिन्दुओं के श्राद्ध, एकादशी, तीर्थ–व्रत, मन्दिर आदि सबका तीव्र विरोध किया और दोनों धर्मो की इस वाह्याडम्बर जनित अन्ध श्रद्धा के लिए तीव्र भर्त्सना की।' मूर्ति पूजा जैसे विरोध को लेकर कबीर भ्रम विधौंसण कौ अंगर में कहते हैं–

'पाँहिन फूंका पूजिए, जे जनम न देई जाब।
आंधा नर आसामुषी, याँ ही खोवै आब।।'

कबीर बड़े बेबाक तरीके से पूजा पद्धति का खंडन करते हैं। पत्थर का देव स्थान है। और उसमें पत्थर की ही प्रतिमा स्थापित की गयी है। पूजने वाला भी अन्धा है। ऐसी पूजा पद्धति से तो किसी सिद्धि प्राप्ति की आशा तो कत्तई नहीं रखनी चाहिए। कबीर अपने पद के माध्यम से सम्बोधित करते हुए कहते हैं–

'जो पाथर को कहिते देव। ताकी बिरथा होवै सेव ।।
जो पाथर की पाई–पाई तिस की घाल अजाई जाई।।'

सरल और सच्चा जीवन व्यतीत करने वाले संतों और भक्तों ने सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग के विपरीत जो आचरण देखा है उसका बराबर विरोध किया है। संत साहित्य लोक तथा समाज से गहन रूप में संयुक्त रहा है। संतों ने इस बात का बखूबी तरीके से प्रत्यक्ष

अनुभव किया था कि किसी भी प्रकार का कर्मकांड हो लोक जीवन को किसी प्रकार की भावात्मक प्रेरणा नहीं देता। बल्कि यह कह सकते हैं कि लोक इन रुड़ियाँ और कर्मकांड जैसे अंधविश्वासों को ढोता आ रहा है। डॉ. भगीरथ मिश्र इस बात का जिक्र करते हुए कहते है कि 'असत्य पर आधारित कवियों, पाखंडों और आडम्बरों से प्रथम तो सामाजिक चेतना कुंठित होती है और भीरता आती है, दूसरे आत्मविश्वास का भाव घटता है और तीसरे पारस्परिक भेदभाव बढ़ता है। यदि समाज के अंतर्गत इस प्रकार के आडम्बर आ गये हो, तो उनको दूर करना पहला काम है, क्योंकि उनके दूर किये बिना विभिन्न वर्गों और समुदायों का भेद–भाव नही मिट सकता।' ऐसे आडम्बरों और पाखंडों का खंडन संत कवियों ने स्थान–स्थान पर किया है।

समाज में अनेक दुष्कर्म करके भी लोग तीर्थ या हज करके पापों से पूरी तरह निवृत्त मान बैठते है।

यदि तीर्थ स्थान के बाद भी मन की अपवित्रता बनी रहे, तो इसका क्या लाभ हुआ? यदि तीर्थ–यात्रा के बाद भी वही सामान्य मृत्यु का ग्रास बनना है तो यह सब व्यर्थ है।

संत कवियों का विचार है कि अपने शरीर के अंदर स्थित मनःस्थितियों को पवित्र रखना ही तीर्थ के समान है।

धर्म और समाज दोनों में भेद–भाव डालने वाली तथा दिखावेपन की बातों का संत कवियों ने तीव्र विरोध किया है। वे माला लेकर उस जाप का विरोध करते हैं जिसमें मन इधर–उधर फिरता है और उस नमाज की भी निंदा करते हैं जो हृदय के कपट–भाव और जीव हिंसा और हत्या को दूर नहीं कर सकती है। ईश्वर को मन्दिर, मस्जिद या मूर्ति में ही केन्द्रित कर केवल वहीं जाने पर धर्म–भाव को मन में लाना और अन्य स्थानों पर अत्याचार और पाप करना, सत्य व्यवहार से दूर है। अगर हम यथार्थ में देखें तो ये धर्माडम्बर हमें झूठा मार्ग बताते हैं।

मध्ययुगीन समाज में आडम्बर और ढ़ोंगी व्यवस्था को लेकर रवीन्द्र कुमार सिंह कई प्रश्न खड़े करते हैं। उनके कथनानुसार– 'जो मूर्ति–पूजा में अपना समय लगाते हैं, उन्होंने तो अपनी मूल–पूंजी भी नष्ट कर डाली। जब ईश्वर का निवास हृदय के भीतर भी है, तो बाहर जाने का क्या लाभ? अतः मूर्तियों का चरणामृत पीना या उनका पूजन करना, सब व्यर्थ है। जो स्वनिर्मित मूर्ति को संसार का रचयिता, स्रष्टा और नियंता समझ बैठा है, उस जैसा मूर्ख कौन हो सकता है। किन्तु सच बात यह है कि मध्ययुगीन समाज ऐसे ही अन्धकार में डूब चुका था।'' मध्ययुगीन समाज में फैले खोखले लोकाचार और रुढ़ियों पर संतों ने तीव्र व्यंग्य किये हैं। संत दरिया का यहाँ उदाहरण देना समीचीन लगता है। विज्ञान द्वारा यह प्रमाणित है कि जो वस्तु निर्जीव है उसमें जीवन की कल्पना करना व्यर्थ है। इसी बात को लेकर संत दरिया लोगों की मानसिकता बदलने की बात करते हैं। वे समझाते हैं कि जो मूर्ति न कुछ खाती है और न बोलती है, उसकी पूजा करने से कुछ होने जाने वाला नहीं है।

मध्यकालीन समाज में जहाँ एक तरफ निर्गुण मतावलंबियों ने मूर्ति–पूजा का जोरदार खंडन किया है, वहीं दूसरी तरफ कर्मकाण्डियों एवं ढोंगियों के लिए समुचित समाधान की व्यवस्था भी कर दी है। ऐसे लोगों के लिए संतों ने साकारोपसना का मार्ग बतलाया। संतों ने बतलाया की यदि पूजा अनिवार्य ही है, तो उसके बदले साधुओं की पूजा कीजिये, क्योंकि कम–से–कम वे बोलते भी हैं तथा अनुभव करने की क्षमता भी है। इसमें कोई संदेह नहीं कि समस्त संत कवियों में कबीर एक ऐसे क्रांतिकारी योद्धा हैं जिसने मूर्ति पूजा पर सबसे तीव्र प्रहार किया है। कबीरदास कहते हैं–

'जेती देख आत्मा, वेता सालिगराम।
साधू प्रतपि देव हैं, नहीं पावर सू कौम।।'

कबीर की कहन क्षमता इतनी मारक है की बड़ी ही सहजता से वे न कहते हुए भी सब कुछ कह डालते हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी इस बात को व्याख्यायित करते हैं– 'सच पूछा जाए तो आज तक हिन्दी में ऐसा जबरदस्त व्यंग्य लेखक पैदा ही नहीं हुआ है। उनकी साफ चोट करने वाली भाषा, बिना कहे भी सब कुछ कह देने वाली शैली और अत्यंत सादी किन्तु

अत्यंत तेज प्रकाशन–भंगी अनन्य साधारण है। हमने देखा है कि बाह्याचार पर आक्रमण करने वाले संतों और योगियों की कमी नहीं है, पर इस कदर सहज और सरस ढंग से चकनाचूर करने वाली भाषा कबीर के पहले बहुत कम दिखाई दी है।'

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1. रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, कमल प्रकाशन
2. श्याम सुन्दर दास, कबीर ग्रन्थावली
3. डॉ0 पारसनाथ तिवारी, कबीरवाणी संग्रह
4. माता प्रसाद, कबीर ग्रन्थावली
5. डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य का उद्‌भव

इन्टरनेट एवं वेबसाइट

1. Shodhganga@inflibnet
2. www.wikipedia.org
3. https://www.google.com

प्राचीन भारतीय सामाजिक चिन्तन के दार्शनिक पक्ष : एक मीमांसा

डॉ० कृपाशंकर पाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर
संस्कृत विभाग
आर० डी०–डी०जे० कॉलेज मुङ्गेर,
मुङ्गेर विश्वविद्यालय मुङ्गेर, बिहार

विवेकपूर्ण दृष्टिकोण को दर्शन कहते हैं। दर्शन में बाहरी और आन्तरिक दोनों प्रकार का "देखना" सन्निहित है। दर्शन में जो देखने क्रिया है; मोटे तौर पर ऐसा लगता है कि यह आँखों से ही सम्पादित होती है परन्तु ऐसा नहीं है बल्कि समस्त इन्द्रियजन्य ज्ञान दर्शन है। ज्ञानेन्द्रियों के अतिरिक्त अंतःकरणचतुष्टय से भी जो ज्ञान होता है वह भी दर्शन है। दर्शन की सर्वोच्चता आत्मा के अपरोक्ष ज्ञान में सन्निहित है। दर्शन हमारे ऋषियों की मेधा से उत्पन्न हुआ है। प्राचीन भारतीय ऋषियों ने तप, स्वाध्याय और योगबल से अपने विवेक को पुष्ट किया था और उसी विवेक के बल पर उन्होंने तत्कालिक समाज का मार्गदर्शन किया था। उन्होंने अनेक कालजयी दर्शनग्रन्थों का सृजन किया जो आगे चलकर न केवल भारतवर्ष अपितु समग्र वसुधा के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हुए। प्राचीन भारतीय समाज की संरचना के मूल में इन्हीं ऋषियों की विचारशीलता समायी हुई है। ऋषियों ने इन विचारों को अपने अनुभव के धरातल पर परखा और फिर इन्हीं पुष्ट विचारों से समाजोपयोगी सिद्धान्तों को गढ़ा।

प्राचीन भारतीय समाज के मूल में ऋषियों की दार्शनिकदृष्टि स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। उन्होंने समाज में समरसता और सहयोग बनाये रखने के लिए अनेक वैज्ञानिक उपक्रम किया था। वैदिक ऋषियों ने समाज के लोगों को योग्यतानुसार चार वर्णों में विभाजित किया था. ..ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। पुरुषसूक्त में आता है–

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्य कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।(1)

उस विराट पुरुष के मुख से ब्राह्मण, बाहुओं से क्षत्रिय, जंघों से वैश्य और चरणों से शूद्र की उत्पत्ति हुई। विराट पुरुष और कोई नहीं बल्कि समग्र अस्तित्वरूप परमात्मसत्ता ही है। ऋषियों ने वेदमंत्रों की अनुभूति करके उसे लिखा। चारों वर्णों का समान महत्त्व था। शूद्रय जिसे कुछ तथा कथित लोग निम्न समझते हैं; वे विराट पुरुष के चरण से उत्पन्न हुए। यह सर्वविदित है कि हमारे चरण ही हमारे शरीर का भार वहन करते हैं अन्यथा हम एक कदम भी नहीं चल सकते हैं। हमें जब किन्हीं का सम्मान करना होता है तब हम उनके चरणस्पर्श करते हैं। ऋषियों की

इस दार्शनिक दृष्टि की अवहेलना का ही परिणाम है ऊँच–नीच की भावना। अपनी योग्यता और रुचि के अनुसार चारों वर्ण अपने–अपने कर्त्तव्यों का सम्पादन करते थे। ब्राह्मणों के जिम्मे शिक्षा–दीक्षा और यज्ञीय विधान था। क्षत्रियवर्ण विराटपुरुष के बाहुओं से उत्पन्न होने के कारण शक्ति का प्रतीक था जिसके जिम्मे राष्ट्र की रक्षाव्यवस्था थी तथा वैश्य अन्न और धन के द्वारा चारों वर्णों का पोषण करते थे।इन योग्यताओं से जो सम्पन्न नहीं थे वे समाज के अन्य सेवाकार्य करते थे जो शूद्र कहलाते थे। चारों वर्णों का अपना महत्त्व था। वर्णों की उत्पत्ति के विषय में श्रीमद्भगवद्गीता में भी आता है। भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं कि गुण और कर्म के विभागपूर्वक मेरे द्वारा चारों वर्णों की सृष्टि की गयी है।

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्।।(2)

समग्र मानवजीवन को ऋषियों ने कुल चार आश्रमों में विभाजित किया था।ब्रह्मचर्य,गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास।वेदों में यत्र–तत्र आश्रमव्यवस्था का स्वरूप देखने को मिलता है–

ब्रह्मचारी चरति वे विषद् विषः सः देवानः भवत्येकमङ्गम् (3)
ब्रह्मचर्यं समाप्य गृही भवेत्गृही भूत्वा वनी भवेत्वनी भूत्वा प्रव्रजेत् (4)

अत्यन्त सुव्यवस्थित ढंग से सौ वर्ष के मानवजीवन को पच्चीस–पच्चीस वर्षों के उक्त चार आश्रमों में विभाजित किया गया था। ब्रह्मचर्याश्रम में विद्या और कौशल का अर्जन, गृहस्थाश्रम में धनार्जन एवं संतानोत्पत्ति, वानप्रस्थाश्रम में पुण्यार्जनध्धर्मकार्य तथा संन्यासाश्रम में गृहत्याग करके पूर्णरूपेण आत्मकल्याण और जगद्धिताय व्यक्ति तत्पर हो जाता था। समग्र मानव जीवन इस प्रकार का विभाजन समग्र विश्व में प्राचीन भारत के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं नहीं देखने को मिलता है।यह स्वयं में सुनियोजित और विवेकपूर्ण व्यवस्था थी जो आज भी हमारे लिए प्रासंगिक हो सकती है। इसके पीछे का जो दर्शन था वह मानव जीवन को सार्थक सिद्ध से सम्बंधित था। आज भी यह व्यवस्था दूसरे रूपों में दिखायी पड़ती है। सर्वप्रथम प्राथमिक विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालय तक की शिक्षा फिर आजीविका हेतु रोजगार का चयन करते हुए व्यक्ति गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है। आज वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों का स्वरूप अवश्य बदला है लेकिन उसका अस्तित्व बना हुआ है।

प्राचीन भारतीय समाज में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों उपलब्धियों को महत्त्व दिया गया। इन उपलब्धियों की सम्प्राप्ति हेतु चार पुरुषार्थों की व्यवस्था दी गयी। धर्म–अर्थ–काम–मोक्षरूप पुरुषार्थचतुष्टय का मानवजीवन हेतु अत्यन्त महत्त्व है। धर्म को जीवन के आधार के रूप में रखा गया। धर्मरहित अर्थ और काम को वर्जित माना गया। वैशेषिक सूत्रकार आचार्य कणाद ने लिखा– "यतौभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः"(5) अर्थात् जिससे लौकिक उन्नति एवं पारलौकिक उन्नतिरूप मोक्ष की प्राप्ति हो वह धर्म है। कहा गया कि–

धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति।
धर्मेण पापमदनुपति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद् धर्मं परमं वदन्ति।। (6)

अर्थात् सम्पूर्ण विश्व का आधार धर्म ही है। लोग संसार में कल्याण के लिए धार्मिक व्यक्ति के पास जाते हैं। धर्म से पाप का क्षय होता है। धर्म में ही सब कुछ प्रतिष्ठित है। इसलिए धर्म को सबसे बड़ा कहा गया है। वाल्मीकि रामायण में भी कहा गया कि–

धर्मार्थकामाः किल जीवलोके समीक्षिताधर्मफलोदयेषु।
ये तत्र सर्वे स्युरसंशयं मे, भार्येव वश्याभिसता सपुत्रा।। (7)

अर्थात् इस जीव–जगत में धर्म–फल की प्राप्ति के अवसरों पर धर्म–अर्थ–काम ये सब निस्सन्देह जहाँ धर्म है वहाँ अवश्य प्राप्त होते हैं, जैसे पुत्रवती भार्या पति के अनुकूल रहकर सहायक होती है। धर्म के बिना अर्थ और काम अनर्थक सिद्ध होते हैं। धर्म की तरह अर्थ की भी अपनी प्रासंगिकता है। बिना अर्थ के लौकिक जीवन की कल्पना व्यर्थ है। ऋषियों ने कहा है "अर्थमूलाः क्रियाःसर्वा यत्नस्तस्यार्जने मतः"(8) धर्मपूर्वक अर्थोपार्जन करके कामनाओं का परिशमन किया जाना चाहिए।काम पुरुषार्थ भी महत्त्वपूर्ण पुरुषार्थ है। गीता में श्रीकृष्ण ने स्वयं को धर्म से अविरुद्ध काम बताया है–

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् ।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ।।(9)

विवेकपूर्ण दृष्टिकोण को दर्शन कहते हैं। दर्शन में बाहरी और आन्तरिक दोनों प्रकार का "देखना" सन्निहित है।

दर्शन में जो देखने क्रिया है आँखों से ही सम्पादित होती है। परन्तु ऐसा नहीं है बल्कि समस्त इन्द्रियजन्य ज्ञान दर्शन है। ज्ञानेन्द्रियों के अतिरिक्त अंतःकरणचतुष्टय से भी जो ज्ञान होता है वह भी दर्शन है। दर्शन की सर्वोच्चता आत्मा के अपरोक्ष ज्ञान में सन्निहित है।

मोक्ष को मानवजीवन का सर्वश्रेष्ठ पुरुषार्थ बताया गया क्योंकि यह पुरुषार्थ शेष तीनों पुरुषार्थों का फल है।निरहंकरिता और निश्कामता की साधना से मनुष्य के सम्पूर्ण मोह का जब क्षय हो जाता है तो उसे जन्ममरण के बन्धन मोक्ष मिल जाता है। इस तरह ऋषियों ने समाज में मानवमात्र के लिए पुरुषार्थचतुष्टय का विधान करके उसके इहलोक के सुखसाधन का मार्ग प्रशस्त किया साथ ही सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मतत्त्व में उसकी नित्यस्थिति हेतु परम मांगलिक विधान भी किया।

प्राचीन भारतीय समाज में हमारे मनीषियों ने लोकमंगल की कामना का विस्तार किया था। समष्टि के मंगल में व्यष्टि का मंगल माना गया और समाज के मूलभूत तत्त्वों में इसे सम्मिलित किया गया। लोकमंगल की कामना को पूजा के मंत्रों में सम्मिलित किया गया और मानवमात्र के कल्याण के लिए ईश्वर से प्रार्थना की गयी–

लोकाः समस्ताः सुखिनः भवन्तु (10)
सर्वेषां मंगलं भूयात् सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग भवेत्।।(11)

न केवल तत्कालिक समाज के विभिन्न वर्गों को एक परिवार के रूप में देखा गया अपितु समग्र वसुधा को ही एक परिवार के रूप में ख्यापित किया गया तथा अपने और पराये की भावना को संकीर्ण माना गया–

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वैसुधैव कुटुम्बकम् ।। (12)

व्यक्ति के वास्तविक सुख और शान्ति की अवाप्ति पर जितनी गहराई और सूक्ष्मता से प्राचीन भारतीय चिन्तन में विचार हुआ उतनी गहराई और सूक्ष्मता से विश्व के किसी भी कोने में और किसी भी काल में नहीं हुआ।यह ऋषियों के तपःपूत चिन्तन का आनुभविक सत्य था कि बिना सेवा के आत्मिक सुख नहीं प्राप्त हो सकता अतः समाज में सेवाधर्म पर विशेष बल दिया गया। सेवा जब अहंकाररहित होकर की जाती है तो व्यक्ति का अन्तःकरण निर्मल हो जाता है और वह वास्तविक आनन्द की अनुभूति करता है। सेवाधर्म को मनीषियों ने अत्यंत दुर्लभ बताया है..

सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः (13)

समाज में सेवा के महत्त्वप्रतिपादन के पीछे सामाजिक समरसता और सहकारिता का उद्देश्य सन्निहित है।सभी लोग सेवा का कार्य करेंगे तभी चारों वर्ण अपने–अपने स्तर से समाज और राष्ट्र के लिए कार्य करते हुए आगे बढ़ सकेंगे।

प्राचीन भारत में स्त्रियों को समाज में पूरा सम्मान प्राप्त था। ऐसा कहा गया कि जहाँ नारी का सम्मान होता है वह देवगण निवास करते हैं और जहाँ नारी का अपमान होता है वहाँ समस्त क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं...

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ।।(14)

नारियों के सम्मान के पीछे जो दार्शनिक दृष्टि थी वह यह थी कि नर और नारी बाहर से भले भिन्न–भिन्न आकृतियों से युक्त लगते हों परन्तु उन दोनों के अन्दर वही परमात्मा स्थित है जो समग्र भूतों में निवास करता है। अतः न केवल स्त्रियों का सम्मान अपितु समाज के समस्त प्राणियों का सम्मान किया जाना चाहिए क्योंकि सभी प्राणियों के अन्दर ईश्वर साक्षीरूप में विद्यमान है...

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च।।(15)

ऋषियों ने सबके अन्दर ब्रह्म का साक्षात्कार किया इसलिए अहिंसा पर अत्यधिक बल दिया गया और जीवहत्या तथा परपीड़न को अत्यन्त निन्दनीय कहा गया। अहिंसा को परम धर्म

कहा गया। अहिंसा परमो धर्मः। (16) परम धर्म श्रुतिविदित अहिंसा।(17) अहिंसा को योगदर्शन के प्रणेता भगवान् पतंजलि ने अष्टांग योग में प्रथम स्थान पर परिगणित यम में प्रथम यम के रूप में उल्लिखित किया।(18)

प्राचीन भारत के समाज में चिन्तन की स्वतंत्रता देखने को मिलती है। प्रत्येक ऋषि अपनी दार्शनिक दृष्टि से सम्पन्न होता था। उसकी अपनी साधना पद्धति होती थी। वेदों में भी पर्याप्त वैभिन्य दिखता है।उसके वर्ण्य विषय भी विभिन्न होते हैं।किसी का किसी के लिए पूर्वाग्रह नहीं दिखता। वास्तविक धर्म को संत–महात्माओं के विवेक रूपी गुहा में स्थित बताया गया इसलिए महापुरुषों के पथ को सभी ने सराहा और उसका अनुकरण करने के लिए कहा..

वेदा विभिन्नारू स्मृतयो विभिन्ना नाऽसो मुनिर्यस्य मतं न भिन्नम्।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः स पंथाः।।(19)

श्रम के महत्त्व से सभी परिचित थे।समाज के सभी व्यक्तियों को काम करके खाने को कहा गया।इसके पीछे ऋषियों की दार्शनिक दृष्टि थे।उन्होंने अपने अनुभव से जाना था कि बिना शारीरिक श्रम के न तो मन की शान्ति मिलेगी और न ही शरीर स्वस्थ रह सकेगा । ऋषि कहते हैं कि कर्म करते हुए ही सौ वर्ष जीवित रहने की इच्छा करनी चाहिए परन्तु यह श्रम अर्थात् कर्मय निश्कामता और निरहंकरिता से युक्त होना चाहिए तभी वह जीव से चिपकेगा नहीं अर्थात् उसका कर्म बन्धन नहीं बनेगा। सकाम भाव से यदि कर्म किया जायेगा तो वह कर्म जन्ममरण का हेतु बन जायेगा इसलिए निश्काम श्रम से ही हम अपनी भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति कर सकेंगे। श्रुति में आता है ...

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।।(20)

प्राचीन भारतीय सामिजक चिंतन का ताना–बाना ही कुछ ऐसा बुना गया था कि समष्टि और व्यष्टि दोनों का कल्याण हो। व्यक्ति अपने पुरुषार्थ से अपनी लौकिक इच्छाओं की पूर्ति करे। लेकिन किसी अन्य को क्षति पहुँचाकर अपना उत्कर्ष करना अत्यन्त हेय माना गया।लौकिक इच्छाओं की पूर्ति धर्मपूर्वक होगी तभी आध्यात्मिकता का द्वार भी खुल सकेगा। भौतिक कामनाओं की विवेकोचित पूर्ति के पश्चात् व्यक्ति आध्यात्म में प्रवेश करता है जहाँ समस्त प्रकार की कामनाओं को उखाड़ फेंका जाता है। चित्त जब निश्काम हो जाता है तो वह आत्मस्वरूप ही हो जाता है और आत्मतत्त्व की अपरोक्षानुभूति का हेतु बन जाता है। आत्मतत्त्व की अपरोक्षानुभूति प्रत्येक व्यक्ति का परम लक्ष्य होना चाहिएय ऐसा हमारे मनीषियों ने अपने अनुभूतिपरक ज्ञान से हमें बताया।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि प्राचीन भारतीय सामाजिक चिन्तन के विभिन्न दार्शनिक पक्ष हैं जो तत्कालिक समाज को दिशा देते हैं एवं हमारे ऋषिमेधा को विश्वपटल पर रखते हैं। उपनिषदों में प्राचीन भारतीय चिन्तन विशेषरूप से पुष्ट होकर हमें देखने को मिलता है। जहाँ

परमतत्त्व को ही साध्य बताया गया और इसकी प्राप्ति हेतु विभिन्न नियम एवं उपनियम बनाये गये। इस चिन्तन ने केवल प्राचीन भारत को समृद्ध बनाया अपितु यह आज तक समग्र विश्व के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो रहा है। दुनिया जब–जब वैचारिक रूप से भटकेगी तब–तब प्राचीन भारतीय ऋषियों की दार्शनिक दृष्टि उसे दिशा प्रदान करती रहेगी।

सन्दर्भ :–

1–ऋग्वेद–10.90.12
2– श्रीमद्भगवद्गीता 4.13
3–ऋग्वेद –10.105.5
4– ऐतरेय ब्राह्मण–35.2
5– वैशेषिक सूत्र–1.1.2
6–तैत्तिरीय आरण्यक–10.36
7–वाल्मीकि रामायण–2.21.56
8–नारदस्मृति
9–श्रीमद्भगवद्गीता–7.11
10– मंगल प्रार्थना
11–गरुण पुराण–35.51
12–हितोपदेश–1.69
13–नीतिशतक–58
14–मनुस्मृति–3.56
15–श्वेताश्वतरोपनिषद्–6.11
16–महाभारत–अनुशासन पर्व.115.1
17–रामचरितमानस–उत्तर काण्ड.120
18–अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाःयमाः
(पातंजल योगसूत्र–2.30)
19–महाभारत–वनपर्व.267.84
20–ईशावास्योपनिषद्–द्वितीय मंत्र

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1–ऋग्वेद–सायणभाष्य सहित महामना राजाराम शास्त्री तथा शिवराम शास्त्री गोरे(सम्पादक) 8खण्डों में बम्बई, गुजरात प्रिन्टिंग प्रेस 1882
2–श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर
3–ऐतरेय ब्राह्मण, तारा प्रिन्टिंग वर्क्स,सम्पादकानुवादक डॉ० सुधाकर मालवीय, वाराणसी,1983
4–वैशेषिक दर्शन, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, वि.सं.2059
5–तैत्तिरीयारण्यकम्,चौखम्बा संस्कृत सिरीज वाराणसी।

6–नारदस्मृतिः,चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी
7– गरुण पुराण,गीताप्रेस गोरखपुर
8–हितोपदेश, नारायण पण्डित,बनारस टाटा प्रेस 1981
9–वैराग्यशतकम्,भर्तृहरि, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी,2002
10–मनुस्मृति, आचार्य मनु,रणधीर प्रकाशन हरिद्वार,2010
11–श्वेताश्वतरोपनिषद्, गीताप्रेस गोरखपुर
12–महाभारतम्,महर्षि वेदव्यास, गीताप्रेस गोरखपुर
13– श्रीरामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास जी ,गीताप्रेस गोरखपुर
14–योगसूत्र, महर्षि पतंजलि, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी,2002,पुनर्मुद्रण
15–ईशावास्योपनिषद्, गीताप्रेस गोरखपुर

शिक्षण एवं अधिगम में नवाचार

अच्युत कुमार यादव

सहायक आचार्य
शिक्षक शिक्षा विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय)
प्रयागराज

सार

देश की शिक्षा प्रणाली एक संक्रमण काल में है जिसमें बड़ी संख्या में संस्थान दुनिया भर से नवीन शिक्षण–अधिगम प्रथाओं को अपना रहे हैं। किसी भी शिक्षक के सामने सबसे बड़ी चुनौती छात्रों का ध्यान आकर्षित करना और विचारों को इस तरह से प्रस्तुत करना है कि कक्षा छोड़ने के बाद भी यह उनके साथ लंबे समय तक बना रहे। शिक्षा में, छात्रों की प्रतिबद्धता, विषय के लिए रुचि, स्वयं के भीतर विश्वास, और ऊर्जा को शिक्षण प्रक्रिया में नवाचार के माध्यम से विकसित किया जा सकता है। छात्र के विकास के लिए ये गुण बहुत आवश्यक हैं। ऐसा होने के लिए, कक्षा के अनुभव को फिर से परिभाषित किया जाना चाहिए और शिक्षण सीखने के तरीकों को और अधिक प्रभावी बनाने वाले नूतन विचारों को लागू किया जाना चाहिए। तो यहां कुछ नवीन विचार दिए गए हैं जो शिक्षकों को उनके शिक्षण विधियों को सुदृढ़ करने और उनकी कक्षाओं को रोचक बनाने में मदद करेंगे। शैक्षिक संस्थानों में नवान्वेषी पद्धतियों के उपयोग से न केवल शिक्षा में सुधार होगा बल्कि लोगों को सशक्त बनाने, शासन को सुदृढ़ करने तथा देश के लिए मानव विकास लक्ष्य को प्राप्त करने के प्रयासों को प्रेरित करने की भी क्षमता है।

की–वर्ड: नवाचार, शिक्षण एवं अधिगम, सीखना, शिक्षण विधियाँ।

आज कृत्रिम बुद्धि के समय में पूरे विश्व में प्रतिस्पर्धा अपने चरम पर है। कई देशों ने समझा है कि उन्हें अपनी राष्ट्रीय नवाचार रणनीतियों में शिक्षा के योगदान को बेहतर बनाने और स्वयं शिक्षा प्रणालियों को नया करने के लिए विशिष्ट नीति और निष्पादन रणनीतियों की आवश्यकता है, और शिक्षा खंड के लिए विशिष्ट राष्ट्रीय नवाचार रणनीतियों का निर्माण शुरू कर दिया है। शिक्षा क्षेत्र की नवाचार रणनीतियाँ शिक्षा प्रणाली में अनुसंधान, विकास, लक्षित नवाचार और ज्ञान प्रबंधन के लिए विशिष्ट रणनीतियों को एकीकृत करती हैं। लोग सीखने के लिए संघर्ष करते हैं, और कुछ नया सीखने के लिए कड़ी मेहनत करते हैं। शिक्षा का उद्देश्य न केवल पाठ्य पुस्तक को पढ़ाना और छात्रों को समझाना है बल्कि नवीन सोच, रचनात्मक वातावरण और

आत्मनिर्भरता का सृजन करना भी है इसलिए संस्थानों को शिक्षा में नवीन संचार विधियों को शामिल करना चाहिए जो अच्छा ज्ञान प्रदान कर सके। शिक्षण के नवीन तरीकों को खोजना भी एक महत्वपूर्ण कौशल है। पहले केवल किताबें शिक्षा, व्यक्तिगत अधिगम और व्यक्तिगत शिक्षण का स्रोत थीं। आज, यह शोध अध्ययनों के माध्यम से साबित हो गया है कि सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी और कुशल बना सकती है।

उच्च शिक्षा में कुछ शिक्षण विधियां हैं जिनका उपयोग रचनात्मक तरीके, प्रदर्शन, चर्चा, कहानी सुनाना, रोल प्ले, विजिट, प्रोजेक्ट, प्रयोगशाला, असाइनमेंट, क्विज, समस्या समाधान, संवाद, प्रश्न उत्तर, संगोष्ठी और सम्मेलन विधि, पावर प्वाइंट प्रेजेंटेशन के साथ व्याख्यान, फ्लिप क्लास, ऑडियो और वीडियो प्रस्तुतियों के साथ व्याख्यान, ऑनलाइन शिक्षण आदि के साथ किया जाता रहा है, लेकिन केवल सीमित संख्या में शिक्षक और संस्थान ही नियमित रूप से इन तरीकों का उपयोग कर रहे हैं। छात्रों की सक्रिय भागीदारी, धारणा और संज्ञानात्मक विकास को बढ़ाने के लिए शिक्षण और अधिगम के एक नए प्रतिमान की आवश्यकता है। नवीन और प्रभावी शिक्षण विधियों के माध्यम से पाठ्य शिक्षण सामग्री का दृश्य शिक्षण सामग्री में हस्तांतरण अधिगम में अधिक प्रभावशाली है।

शिक्षा में, छात्रों का ध्यान के प्रति लगाव, जिज्ञासा, रुचि, आशावाद और जुनून को संदर्भित करता है जो छात्र तब दिखाते हैं जब वे सीख रहे होते हैं या पढ़ाए जा रहे होते हैं, जो प्रेरणा के स्तर तक फैली हुई है जिसे उन्हें अपनी शिक्षा में सीखना और प्रगति करना है। जब छात्र पढ़ाए जा रहे पाठ से जुड़े होते हैं, तो वे अधिक सीखते हैं और अधिक समय तक तथ्यों को याद रखते हैं। जो छात्र काम में लगे होते हैं वे अधिक सक्रिय बने रहते हैं और काम पूरा करने में खुशी पाते हैं। इसलिए उनकी कक्षाओं को रोचक बनाए रखना चाहिए। यहां कुछ नवीन विचार दिए गए हैं जो शिक्षकों को उनके शिक्षण विधियों को सुदृढ़ करने और उनकी कक्षाओं को रोचक बनाने में मदद करेंगे।

शिक्षण में नवाचार

शिक्षण में नवाचार का अर्थ होता है, शिक्षक की रचनात्मकता और नवीनता जो शिक्षण की शैली और विधि को बदल देती है। पूरी दुनिया में, शिक्षण संस्थान छात्रों के ज्ञान को बढ़ाने के लिए नए विचारों, विधियों, प्रौद्योगिकी आधारित नवाचारों को लागू करते हैं। शिक्षा के वर्तमान और भविष्य के लिए नवीन शिक्षण आवश्यक है ताकि छात्रों को उनकी पूरी क्षमता तक पहुंचने में मदद मिल सके। उच्च शिक्षा को छात्र की दीर्घकालिक बौद्धिक आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए, उदाहरण के लिए, क्या शिक्षकों द्वारा नई सामग्री प्रदान करने से छात्र को नई अंतर्दृष्टि प्राप्त करने में मदद मिली या बौद्धिक उत्तेजना के नए चौनल खोले गए या छात्र की आवश्यक और रचनात्मक सोच शक्ति को बढ़ाया गया? नई पीढ़ियों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा

करने के लिए सभी शिक्षकों के लिए नूतन शिक्षण एक आवश्यकता है। हालांकि, नूतन शिक्षण के लिए शिक्षकों की योग्यता अभिनव शिक्षण प्रदर्शन को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। कुछ शोध बताते हैं कि कई शिक्षकों में नवीन शिक्षण के लिए दक्षताओं की कमी है।

उद्देश्यः

- कक्षा में शिक्षण के नवीन और प्रभावी तरीकों को बढ़ावा देना।
- छात्रों को पढ़ाने में सर्वोत्तम प्रथाओं को बढ़ावा देना।
- प्रभावी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में प्रौद्योगिकी के उपयोगों को बढ़ावा देना।
- स्वतंत्र, आलोचनात्मक और रचनात्मक सोच को बढ़ावा देने के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में तेजी लाना।
- शिक्षण अधिगम के लिए सहायक के रूप में नवीनतम तकनीकी उपकरणों को शामिल करने वाले कौशल के विकास को सक्षम करना।
- शिक्षण और सीखने की वृद्धि से संबंधित संसाधनों और घटनाओं के बारे में जानकारी प्रदान करना।
- स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय के शिक्षकों द्वारा सर्वोत्तम शिक्षण अधिगम अनुभव साझा करना।
- शिक्षा के लिए स्वतंत्र और अनिवार्य अधिकार प्राप्त करने के लिए शिक्षण और सीखने को सुखद और दिलचस्प बनाना।

नवीन शिक्षण विधियाँ

1. कार्य के प्रति लगाव

आप अपना सर्वश्रेष्ठ तभी दे सकते हैं जब आप वास्तव में जो कार्य करते हैं उससे प्रेम करते हैं। अपने काम से प्रेम करना आपको आराम देता है और जब आप तनावग्रस्त नहीं होंगे तो आप अधिक रचनात्मक और नए विचारों का प्रयोग करने के लिए प्रेरित होंगे।

2. ऑडियो और वीडियो उपकरण

अपने सत्रों में ऑडियो–विजुअल सामग्री शामिल करें। मॉडल, फिल्मस्ट्रिप्स, फिल्मों और सचित्र सामग्री के साथ पाठ्यपुस्तकों को पूरक करें। इन्फो ग्राफिक्स या अन्य माइंड मैपिंग और ब्रेन मैपिंग टूल का उपयोग करें जो उनकी कल्पना को पनपने और बढ़ने में मदद करेंगे। ये तरीके न केवल सुनने की उनकी क्षमता विकसित करेंगे, बल्कि उन्हें अवधारणाओं को बेहतर ढंग से समझने में भी मदद करेंगे। उदाहरण के लिए, आप कुछ मौखिक इतिहास सामग्री प्राप्त कर सकते हैं, लाइव ऑनलाइन चर्चा कर सकते हैं या सार्वजनिक व्याख्यान की प्लेबैक रिकॉर्डिंग कर

सकते हैं। प्रीस्कूलर के लिए बहुत सारे स्मार्ट ऐप हैं जिनका उपयोग आप स्लाइडशो या प्रस्तुतियाँ बनाने के लिए कर सकते हैं।

3. मंथन

अपनी कक्षाओं में विचार–मंथन सत्रों के लिए समय निकालें। ये सत्र रचनात्मक रस प्रवाहित करने का एक शानदार तरीका हैं। जब आपके पास एक ही विचार पर ध्यान केंद्रित करने वाले कई दिमाग होते हैं, तो आप निश्चित रूप से कई विचार प्राप्त करेंगे और सभी को चर्चा में शामिल करेंगे। ये सत्र छात्रों के लिए सही या गलत की चिंता किए बिना अपने विचारों को व्यक्त करने का एक बेहतरीन मंच होगा। शुरू करने से पहले कुछ बुनियादी नियम सेट करें। आप सरल विचार–मंथन या समूह विचार–मंथन या युग्मित विचार–मंथन के लिए जा सकते हैं।

4. कक्षा के बाहर कक्षाए

कुछ सबक सबसे अच्छे से सीखे जाते हैं, जब उन्हें कक्षा के बाहर पढ़ाया जाता है। फील्ड ट्रिप व्यवस्थित करें जो सीखने के लिए प्रासंगिक हों या छात्रों को कक्षा के बाहर टहलने के लिए ले जाएं। बच्चों को यह ताजा और रोमांचक लगेगा और वे तेजी से सिखाई गई चीजों को सीखेंगे और याद रखेंगे। लगभग किसी भी आयु वर्ग के छात्रों के लिए भूमिका निभाना सबसे प्रभावी है। आपको बस आयु वर्ग के आधार पर अनुकूलित करने की आवश्यकता है। आप प्रीस्कूलर को पढ़ाने के लिए भी इस पद्धति का उपयोग कर सकते हैंय बस सुनिश्चित करें कि आप उनके सीमित ध्यान अवधि को पकड़ने के लिए इसे पर्याप्त सरल रखें।

शिक्षण में नवाचार का अर्थ है, शिक्षक की रचनात्मकता और नवीनता जो शिक्षण की शैली और विधि को बदल देती है। शिक्षण संस्थान छात्रों के ज्ञान को बढ़ाने के लिए नए विचारों, विधियों, प्रौद्योगिकी आधारित नवाचारों को लागू करते हैं।

नई पीढ़ियों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सभी शिक्षकों के लिए नूतन शिक्षण एक आवश्यकता है। हालांकि, नूतन शिक्षण के लिए शिक्षकों की योग्यता अभिनव शिक्षण प्रदर्शन को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है।

5. रोल प्ले

रोल प्ले के माध्यम से शिक्षण बच्चों को उनके आराम क्षेत्र से बाहर निकलने और उनके पारस्परिक कौशल को विकसित करने का एक शानदार तरीका है। यह विधि काम आती है, खासकर जब आप साहित्य, इतिहास या वर्तमान घटनाओं को पढ़ा रहे हों। भूमिका निभाने का दृष्टिकोण छात्र को यह समझने में मदद करेगा कि शैक्षणिक सामग्री उसके रोजमर्रा के कार्यों के लिए कैसे प्रासंगिक होगी।

6. नए विचारों का स्वागत करें

एक खुले दिमाग वाला रवैया आपको नई शिक्षण विधियों को नया करने में मदद कर सकता है। हालांकि खुले विचारों वाले, कभी–कभी हम में से अधिकांश नए विचारों के प्रति

अनिच्छा दिखाते हैं। यदि आप एक शिक्षक हैं, तो ऐसा कभी न करें, हमेशा नए विचारों को स्वीकार करने का प्रयास करें, भले ही शुरुआत में यह अजीब लगे।

7. पहेलियाँ और खेल

सीखना मजेदार है जहां पहेलियाँ और खेल शिक्षा का हिस्सा हैं। बच्चों को यह महसूस नहीं हो सकता है कि वे सीख रहे हैं जब उनके पाठ खेल के माध्यम से पेश किए जाते हैं। पहेलियाँ और खेल बच्चों को रचनात्मक रूप से सोचने और चुनौतियों का सामना करने में मदद करते हैं।

8. रचनात्मकता पर पुस्तकें देखें

एक रचनात्मक शिक्षक बनने के लिए, आपको रचनात्मक विचारों और तकनीकों पर कुछ शोध करने की आवश्यकता है। रचनात्मकता पर बहुत सारी किताबें हैं। कुछ बेहतरीन कार्यों को चुनें और सीखना शुरू करें, यह आपके व्यावसायिक विकास के लिए भी सहायक होगा।

9. एक कहानी की तरह सबक का परिचय दें

जरा सोचिए, आप ज्यादा दिलचस्पी के साथ फिल्में क्यों देखते हैं? आप फिल्में देखना पसंद करते हैं क्योंकि आपको व्यस्त रखने के लिए हमेशा एक दिलचस्प कहानी होती है। उस तरह, सीखने के सत्र अधिक दिलचस्प हो जाते हैं जब आप इसे एक कहानी की तरह पेश करते हैं। यदि आप रचनात्मक हैं, तो गणित के पाठ भी दिलचस्प कहानियों से संबंधित हो सकते हैं। यहां तक कि ज्ञान और मानव विकास प्राधिकरण ने स्कूलों पर शिक्षण और सीखने की गुणवत्ता में सुधार के उपाय करने पर जोर दिया है, ये नवीन विचार शिक्षण विधियों को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए निश्चित हैं।

अभिनव सीखने के तरीके

1. क्रॉसओवर लर्निंग

अनौपचारिक सेटिंग्स में सीखना, जैसे कि संग्रहालय और स्कूल के बाद के क्लब, शैक्षिक सामग्री को उन मुद्दों से जोड़ सकते हैं जो शिक्षार्थियों के लिए उनके जीवन में महत्वपूर्ण हैं। ये कनेक्शन दोनों दिशाओं में काम करते हैं। स्कूलों और कॉलेजों में सीखना रोजमर्रा की जिंदगी के अनुभवों से समृद्ध हो सकता हैय कक्षा से प्रश्न और ज्ञान जोड़कर अनौपचारिक शिक्षा को गहरा किया जा सकता है। ये जुड़े अनुभव सीखने के लिए और रुचि और प्रेरणा जगाते हैं। एक प्रभावी तरीका एक शिक्षक के लिए कक्षा में एक प्रश्न का प्रस्ताव और चर्चा करना है, फिर शिक्षार्थियों के लिए संग्रहालय की यात्रा या क्षेत्र की यात्रा पर उस प्रश्न का पता लगाने के लिए, सबूत के रूप में फोटो या नोट्स एकत्र करना, फिर व्यक्तिगत या समूह उत्तर तैयार करने के लिए कक्षा में अपने निष्कर्षों को साझा करना। ये क्रॉसओवर सीखने के अनुभव दोनों वातावरणों की ताकत का फायदा उठाते हैं और शिक्षार्थियों को सीखने के लिए प्रामाणिक और आकर्षक

अवसर प्रदान करते हैं। चूंकि सीखना जीवन भर में होता है, इसलिए कई सेटिंग्स में अनुभवों पर ड्राइंग, व्यापक अवसर शिक्षार्थियों को रिकॉर्डिंग, लिंकिंग, याद करने और उनकी विविध सीखने की घटनाओं को साझा करने में सहायता करना है।

2. तर्क के माध्यम से सीखना

छात्र पेशेवर वैज्ञानिकों और गणितज्ञों के समान तरीके से बहस करके विज्ञान और गणित की अपनी समझ को आगे बढ़ा सकते हैं। तर्क छात्रों को विपरीत विचारों में भाग लेने में मदद करता है, जो उनके सीखने को गहरा कर सकता है। यह सभी के सीखने के लिए तकनीकी तर्क को सार्वजनिक करता है। यह छात्रों को दूसरों के साथ विचारों को परिष्कृत करने की भी अनुमति देता है, इसलिए वे सीखते हैं कि वैज्ञानिक दावों को स्थापित करने या खंडन करने के लिए एक साथ कैसे काम करते हैं। शिक्षक छात्रों को ओपन–एंडेड प्रश्न पूछने, अधिक वैज्ञानिक भाषा में टिप्पणियों को फिर से बताने और स्पष्टीकरण बनाने के लिए मॉडल विकसित करने और उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करके कक्षाओं में सार्थक चर्चा शुरू कर सकते हैं। जब छात्र वैज्ञानिक तरीकों से बहस करते हैं, तो वे सीखते हैं कि कैसे मोड़ लेना है, सक्रिय रूप से सुनना है, और दूसरों को रचनात्मक रूप से जवाब देते हैं। व्यावसायिक विकास शिक्षकों को इन रणनीतियों को सीखने और चुनौतियों को दूर करने में मदद कर सकता है, जैसे कि छात्रों के साथ अपनी बौद्धिक विशेषज्ञता को उचित रूप से कैसे साझा किया जाए।

3. आकस्मिक अधिगम

आकस्मिक अधिगम अनियोजित या अनजाने में अधिगम है। यह एक ऐसी गतिविधि को अंजाम देते समय हो सकता है जो सीखी गई गतिविधि से असंबंधित प्रतीत होती है। इस विषय पर प्रारंभिक शोध से पाया गया कि लोग अपने कार्यस्थलों पर अपने दैनिक दिनचर्या में कैसे सीखते हैं। कई लोगों के लिए, मोबाइल उपकरणों को उनके दैनिक जीवन में एकीकृत किया गया है, जो प्रौद्योगिकी समर्थित आकस्मिक सीखने के कई अवसर प्रदान करता है। औपचारिक शिक्षा के विपरीत, आकस्मिक शिक्षा का नेतृत्व शिक्षक द्वारा नहीं किया जाता है, न ही यह एक संरचित पाठ्यक्रम का पालन करता है, या औपचारिक प्रमाणन में परिणाम होता है। हालांकि, यह आत्म–प्रतिबिंब को ट्रिगर कर सकता है और इसका उपयोग शिक्षार्थियों को फिर से तैयार करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए किया जा सकता है जो अन्यथा अधिक सुसंगत और दीर्घकालिक सीखने की यात्रा के हिस्से के रूप में अलग–अलग सीखने के टुकड़े हो सकते हैं।

4. वैज्ञानिक तरीके से सीखना (दूरस्थ प्रयोगशालाओं के साथ)

दूरस्थ प्रयोगशाला प्रयोगों या दूरबीनों को नियंत्रित करने जैसे प्रामाणिक वैज्ञानिक उपकरणों और प्रथाओं के साथ संलग्न होने से विज्ञान पूछताछ कौशल का निर्माण हो सकता है, वैचारिक समझ में सुधार हो सकता है और प्रेरणा बढ़ सकती है। वैज्ञानिकों और विश्वविद्यालय

के छात्रों के लिए पहले विकसित किए गए विशेष उपकरणों तक दूरस्थ पहुंच, अब प्रशिक्षु शिक्षकों और स्कूली छात्रों के लिए विस्तार कर रही है। एक दूरस्थ प्रयोगशाला में आमतौर पर उपकरण या उपकरण, इसे संचालित करने के लिए रोबोटिक हथियार और कैमरे होते हैं जो प्रयोगों के दृश्य प्रदान करते हैं जैसे वे प्रकट होते हैं। रिमोट लैब सिस्टम शिक्षकों के लिए उपयोगकर्ता के अनुकूल वेब इंटरफेस, पाठ्यक्रम सामग्री और व्यावसायिक विकास प्रदान करके भागीदारी के लिए बाधाओं को कम कर सकते हैं। उचित समर्थन के साथ, दूरस्थ प्रयोगशालाओं तक पहुंच शिक्षकों और छात्रों के लिए व्यावहारिक जांच और प्रत्यक्ष अवलोकन के अवसरों की पेशकश करके समझ को गहरा कर सकती है जो पाठ्यपुस्तक सीखने के पूरक हैं। दूरस्थ प्रयोगशालाओं तक पहुंच भी ऐसे अनुभवों को स्कूल की कक्षा में ला सकती है। उदाहरण के लिए, छात्र दिन के स्कूल विज्ञान कक्षाओं के दौरान रात के आकाश का अवलोकन करने के लिए एक उच्च–गुणवत्ता, दूर की दूरबीन का उपयोग कर सकते हैं।

5. सन्निहित शिक्षा

सन्निहित सीखने में सीखने की प्रक्रिया का समर्थन करने के लिए एक वास्तविक या नकली दुनिया के साथ बातचीत करने वाले शरीर की आत्म–जागरूकता शामिल है। सन्निहित सीखने में, उद्देश्य यह है कि मन और शरीर एक साथ काम करते हैं ताकि शारीरिक प्रतिक्रिया और क्रियाएं सीखने की प्रक्रिया को सुदृढ़ करें। इसकी सहायता के लिए प्रौद्योगिकी में पहनने योग्य सेंसर शामिल हैं जो व्यक्तिगत भौतिक और जैविक डेटा इकट्ठा करते हैं, दृश्य प्रणाली जो आंदोलन को ट्रैक करती है, और मोबाइल डिवाइस जो झुकाव और गति जैसे कार्यों का जवाब देते हैं। इस दृष्टिकोण को भौतिक विज्ञान के पहलुओं जैसे घर्षण, त्वरण और बल की खोज के लिए लागू किया जा सकता है, या अणुओं की संरचना जैसी नकली स्थितियों की जांच करने के लिए। इस पत्र में छात्रों को अपने कौशल को प्रशिक्षित करने का एक नया तरीका देकर कक्षा में नवीन शिक्षण और सीखने के तरीकों पर ध्यान केंद्रित किया गया है। शिक्षकों को कक्षा में नई विधि प्रौद्योगिकी को अपनाने और सामग्री को संशोधित करने के लिए मल्टीमीडिया का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करना। यह शिक्षक को पाठ्यवस्तु को अधिक सार्थक तरीके से प्रस्तुत करने में मदद करेगा। नए तरीकों को शामिल करके, छात्रों को अधिक ध्यान देने और जानकारी को बेहतर बनाए रखने के लिए प्रेरित किया जाता है। शिक्षण का मुख्य उद्देश्य छात्र के दिमाग में सूचना या ज्ञान को पारित करना है। शिक्षण संचार के सफल तरीके पर निर्भर करता है। अभिनव, शिक्षकों और शिक्षार्थियों को एक दूसरे की आवश्यकता पूर्ति में सहायक होती है।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची</u> :–

- अग्रवाल, जे. सी. (2013), शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्ध, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।

- पाठक, पी० डी० (2018), शिक्षण के सिद्धान्त एवं विधियाँ, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- मालवीय, राजीव (2014), शिक्षा के नूतन आयाम, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
- मालवीय, राजीव (2017), शिक्षा में नवाचार एवं आधुनिक प्रवृत्तियाँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
- मालवीय, राजीव (2013), शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्ध, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
- योगेन्द्रजीत, भाई (2019), शिक्षा में नवाचार, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
- Siddiqui, Hena (2018), Innovations & New Trends in Education, Agrawal Publications, Agra.

साहित्यिक शोध – अर्थ – स्वरूप एवं क्षेत्र

डॉ0 वर्षा रानी

असि. प्रो. संस्कृत – विभाग,
डॉ. भीमराव आम्बेडकर विश्वविद्यालय
आगरा

सहितस्य भाव साहित्यम अर्थात सहित का भाव होना ही साहित्य है। आचार्य विश्वनाथ के अनुसार वाक्यम रसात्मक काव्यम[1] (रसात्मक वाक्य ही काव्य है)। महावीर प्रसाद के शब्दों में अंतःकरण की वृत्तियों का चित्र काव्य[2] है। साहित्यिक शब्द साहित्य+इक प्रत्यय[3] के योग से बना है। मानव जाति सृष्टि के आरंभ से ही शोध शील रही है। यह शोध शीलता की मूल प्रवृत्ति ही विविध ज्ञान–विज्ञान और उसे प्रसूत प्रगति का स्रोत है। वास्तव में शोध शब्द का प्रयोग पाश्चात्य देशों में प्रयुक्त रिसर्च शब्द के पर्याय के रूप में होता है। विषय के विश्लेषण विवेचन कि जिस वैज्ञानिक पद्धति को अपनाकर पाश्चात्य देशों के विश्वविद्यालयों में रिसर्च का कार्य होता था उसी का अनुकरण करते हुए भारतीय विश्वविद्यालयों में भी शोध कार्य प्रारंभ किया गया है।

संप्रति रिसर्च के पर्याय के रूप में सर्वाधिक प्रचलित एवं सर्वस्वीकृत शब्द 'शोध' ही है शोध शब्द शुध् धातु में घय्य प्रत्यय लगाने से बनता है शुध् धातु का अर्थ होता है – सुधारना, शंकाओं का निवारण करना, शुध करना इस से निर्मित संज्ञा श्शोधन" का अर्थ है शुद्ध या पवित्र करना, दुरुस्त करना, छानबीन, जांच, अनुसंधान। शोधन में सम् उपसर्ग के संयोग से संशोधन शब्द निर्मित होता है, जिसका कोशगत अर्थ है– शुद्ध करना, सुधारना, संस्कार करना इस प्रकार स्पष्ट है कि शोध में शोधन और संशोधन के साथ–साथ अनुसंधान के निहितार्थ भी भली प्रकार समाहित है। शुद्ध शब्द संस्कार परिष्कार के आशय के साथ–साथ खोजने, मनन–चिंतन करने, जांचने, परखने के अभिप्राय को भी अपने लघु कलेवर में समेटे हुए है।

हिंदी में 'शोध' शब्द स्थूल खोजने की क्रिया से लेकर सूक्ष्म चिंतन–मनन और परीक्षण की क्रियाओं तक के आशयों को समाहित किए हुए हैं गोस्वामी तुलसीदास ने खोजने की स्थूल क्रिया के लिए शोध के तद्भव रूप 'सोध' का प्रयोग करते हुए लिखा है– सीय सोध कपि भालु सब,बिदा किये रघुनाथ। गोस्वामी जी ने इसे खोज के संज्ञा दृ रूप में प्रयुक्त करते हुए लिखा है अब लगि नहिं सिय सोधु लहयो है। उन्होंने सुक्षम चिंतन–मनन, मंथन आदि के अर्थ में भी इस शब्द का व्यवहार किया है। तात धरम मत तुम सब सोधा * में शोधन का यही सूक्ष्म रूप विद्यमान है।[4]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह ज्ञात होता है कि शोध शब्द पर्याप्त प्राप्त सामग्री के परिष्कार या संशोधन तक ही सीमित नहीं है अपितु यह तथ्यों की खोज और तत्वों के चिंतन–मनन के अर्थ का भी द्योतक है।

साहित्यिक शोध का स्वरूप वैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय शोध की अपेक्षा अधिक जटिल होता है। साहित्य की स्वरूपगत जटिलता साहित्यिक शोध की जटिलता का मूल कारण होती है। जहां, विज्ञान का बोध भौतिक है, समाज समाज शास्त्रों का बोध वैचारिक है, वहां साहित्य का बोध भौतिकता और वैचारिकता से आगे अनुभूतिपरक है, जिसमें विचार या चिंतन के साथ–साथ भावना और कल्पना का भी सामंजस्य रहता है। इस संबंध में डॉ नगेंद्र का मंतव्य है कि साहित्य में आत्मा की प्रधानता है। अतः साहित्य के अध्ययन में आत्म तत्व का बहिष्कार कर एकांत वस्तुपरक अध्ययन की संभावना नहीं की जा सकती। इस प्रकार का अध्ययन वस्तु से उलझकर जड़ बन जाएगा क्योंकि साहित्य तत्वत–वस्तु नहीं अनुभूति है। इसलिए साहित्यिक शोध के लिए शोधक में ज्ञान–वृत्ति के साथ–साथ सृजन, सौंदर्य और संस्कृति की पोषक भाव–का समुचित संयोग भी अभीष्ट है। अर्थात बौद्धिक विश्लेषण क्षमता के साथ–साथ सौंदर्य ग्राही सृजनात्मक प्रतिभा का होना भी आवश्यक है। साहित्य का कलात्मक प्रभाव भावात्मक होता है। उसका लक्ष्य लोकरंजन तथा लोकमंगल है। साहित्यिक शोध में भी लोक मंगल की प्रेरणा निहित रहती है। शोधक अनेक बार ऐसे तथ्यों या तत्वों की खोज करता है जिनसे सांप्रदायिक, धार्मिक, राजनीतिक संकीर्णतों और भेदभावों के उन्मूलन की प्रेरणा मिलती है तथा भावात्मक एकता और सांप्रदायिक सामंजस्य का पथ प्रशस्त होता है। डॉक्टर मलिक मोहम्मद का 'वैष्णव भक्ति आंदोलन का अध्ययन' तथा डॉ. निजामुद्दीन का हिंदी में 'राम भक्ति संबंधी महाकाव्यों का अध्ययन' इसी प्रकार के शोधात्मक प्रयास है।

साहित्यिक शोध का क्षेत्र

साहित्य की विकास प्रक्रिया के पांच सामान्य सूत्र निर्धारित किए गए हैं –

1. साहित्यकार की सृजनात्मक प्रतिभा
2. परंपरा
3. परिवेश
4. द्वंद
5. संतुलन[5]

इन उपर्युक्त तत्वों के आधार पर साहित्य के विकास की प्रक्रिया रचनाकार की प्रतिभा की रचनात्मक ऊर्जा से अनुप्रणित रहती है। किसी भी रचनाकार की प्रतिभा को परंपरा के आदर्शात्मक तत्वो और परिवेश की यथार्थ समस्याओं के द्वंद से गुजरना पड़ता है और अंत में आदर्श और यथार्थ में सामंजस्य संतुलन स्थापित होता चलता है, किंतु संतुलन के बाद फिर नया द्वंद प्रारंभ हो जाता है और नया चक्र चलता रहता है।

डॉ हरिश्चंद्र शर्मा अपनी पुस्तक शोध प्रविधि मैं प्रबुद्ध एवं पारदर्शी प्रतिभा वाले शोधार्थियों का मार्गदर्शन करते हुए साहित्य इतिहास क्षेत्र में शोध की अनेकानेक संभावनाएं बताते हुए विभिन्न आयाम प्रस्तुत करते हैं–

कृतिकारों और कृतियों की खोज

इस वर्ग मैं अज्ञात या फिर अल्प ज्ञात कवियों के जीवन वृत्त तथा कृतियों एवं पांडुलिपियों की खोज, संपादन के साथ–साथ युग प्रवर्तक साहित्यकारों के ऐतिहासिक महत्व और योगदान का मूल्यांकन आदि शोध के विषय समाहित है।

प्रेरणा स्रोतों और प्रभावों का अध्ययन

इस वर्ग में संत, सूफी, कृष्ण, राम, रीति से संबंधित परंपराओं या धाराओं के प्रेरणा स्रोतों के साथ–साथ स्वदेशी और विदेशी धाराओं के प्रभाव का अध्ययन समाहित है।

विकासात्मक अध्ययन

इस वर्ग में सभी परंपराओं तथा धाराओं का प्रथक प्रथक प्रारंभ से अब तक का विकासात्मक अध्ययन, रहस्यवाद,

छायावाद, प्रगतिवाद आदि तत्वों का विकासात्मक अध्ययन, अद्वैत, शुद्धाद्वैत, विशिष्टद्गैत, द्वैत, अद्वैत आदि चिंतनों का विकासात्मक अध्ययन, दूत काव्य, नीति काव्य, बारहमाह, महाकाव्य, खंडकाव्य, मुक्तक काव्य, उपन्यास, नाटक, कहानी आदि गद्य विधाओं का पृथक पृथक विकासात्मक अध्ययन समाविष्ठ है ।

युगीन परिवेश, साहित्य और प्रवृत्तियों का अध्ययन

इस वर्ग में प्रत्येक युग के परिवेश, साहित्य और प्रवृत्तियों के निरूपण से संबंधित युगीन इतिहास के साथ–साथ युग युगीन अखंड इतिहास के लेखन और पुनर्लेखन की आवश्यकता सदैव बनी रहेगी ।

भाषा और शिल्प के विकास का अध्ययन

अपभ्रंश, अवधी, मैथिली भाषा, ब्रजभाषा , राजस्थानी , खड़ी बोली आदि काव्य भाषाओं के विकासात्मक अध्ययन के साथ– साथ काव्य रूपों, छंदों , अलंकारों आदि के विकास का अध्ययन क्षेत्र समाहित है ।

विभिन्न युगों, परंपराओं, कवियों, कृतियों, प्रवृत्तियों आदि का तुलनात्मक अध्ययन[6]

उपर्युक्त सभी आयाम शोध के लिए नए विषय प्रस्तुत करते हैं । वास्तव में साहित्य ऐतिहासिक शोध का लक्ष्य तथ्य आख्यान के माध्यम से साहित्यिक कृतियों के ऐतिहासिक क्रम में निहित उस सांस्कृतिक चेतना की खोज करना है जो पूरी साहित्यिक श्रृंखला को एक सूत्र में गुम्फित करती है। विभिन्न युगों की प्रस्तुति और परिवेश की विभिन्नताओं के रहते हुए भी किसी देश या समाज के साहित्य की केंद्रीय चेतना एक ही रहती है।

काव्यशास्त्रीय शोध

काव्यशास्त्र काव्य और साहित्य का दर्शन तथा विज्ञान है। यह काव्य कृतियों के विश्लेषण के आधार पर समय– समय पर उद्धावित सिद्धांतों की ज्ञान राशि है। काव्यशास्त्र के लिए पुराने नाम साहित्य शास्त्र का अलंकार शास्त्र है साहित्य के व्यापक रचनात्मक वांग्मय को समेटने पर इसे समीक्षा शास्त्र भी कहा जाने लगा[7]। यह दर्शनशास्त्र की भांति ही सूक्ष्म और गहन है। परंपराओं का अखंड सातत्य भारतीय चिंतन की सामान्य विशेषता है। रस चिंतन की जिस परंपरा का विकास आचार्य भरत से हुआ था वही आनंद वर्धन, अभिनव गुप्त, मम्मट, विश्वनाथ, पंडित राज जगन्नाथ से होती हुई आचार्य रामचंद्र शुक्ल, डॉ नगेंद्र आदि तक अखंड रूप में अग्रसर होती रही। इतना ही नहीं अलंकारवादियों, रीतिवादियों, वक्रोक्ति वादियों आदि ने भी रस को

अपने चिंतन का विषय बनाया और इसे उचित महत्ता भी प्रदान की इस प्रकार काव्य सिद्धांतों के आचार्य ने वस्तुनिष्ठ तथा तर्क सम्मत दृष्टि से काव्य के केंद्रीय सृजनात्मक तत्व का अनुसंधान किया। कवि के उस मौलिक सृजनातक सौंदर्य या चारुत्व को ही भामह, दंडी आदि आचार्यों ने अलंकार, आचार्य कुंतक ने वक्रोक्ति, आचार्य वामन ने रीति तथा आचार्य आनंदवर्धन ने ध्वनि नाम से अभिहित किया है। यह सभी आचार्य अपने मत की प्रतिष्ठा के लिए दूसरे मतों को स्वमत में समाहित करके अपने मत की सर्वांगीणता सिद्ध करते दिखाई पड़ते हैं।

इस प्रकार समस्त भारतीय काव्यशास्त्र चिंतन में अनेकता में एकता और एकता में अनेकता के दर्शन होते हैं। रीति, अलंकार, वक्रोक्ति, ध्वनि के दर्शन होते हैं। रीति, अलंकार, वक्रोक्ति, ध्वनि, औचित्य काव्य के सत्य है तो रस सब सत्यो का भी सत्य है।

रस सिद्धांत काव्य– संवेदना और लोक संवेदना में तादात्म्यखोज करता है। अतः इसकी दृष्टि काव्य सापेक्ष के साथ–साथ लोक सापेक्ष भी है। रस सिद्धांत अपने चिंतन में सर्वाधिक जनतांत्रिक है किंतु यह भी स्मरणीय है कि अलंकार रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि के बिना सरस काव्य की सृष्टि संभव नहीं है। अतः इसकी सत्ता और महत्ता भी सर्वथा स्वीकार्य है। काव्य शास्त्रीय शोध में भारतीय काव्यशास्त्र के साथ पाश्चात्य काव्यशास्त्र भी समाहित है। वर्तमान भारतीय काव्यशास्त्र है चिंतन पर पाश्चात्य काव्यशास्त्र चिंतन का प्रचुर प्रभाव पड़ा है। ऐसी स्थिति में प्रभाव निरूपक शोध साथ ही तुलनात्मक शोध के भी नए आयाम उद्घाटित हुए हैं।[8]

साहित्यिक शब्द साहित्य+इक प्रत्यय के योग से बना है। साहित्यिक शोध के विभिन्न आयामों, पद्धतियों के माध्यम से अनुसंधानकर्ता को शोध के लिए नए विषय के लिए पृष्ठभूमि तैयार करने और शोध प्रविधि का चयन करने में सहायता प्राप्त होगी । साथ ही साहित्यिक शोध का मनोविज्ञान, राजनीतिक शास्त्र, सौंदर्यशास्त्र, दर्शन आदि अन्य दृष्टियां भी यथा स्थान अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। इस प्रकार शोधक कृति में निहित समग्र जीवन दर्शन को भी अपने शोध का आधार बना सकता है।

काव्यशास्त्रीय शोध क्षेत्र को दृष्टिकोण में रखते हुए डॉ हरिश्चंद्र वर्मा ने अपनी पुस्तक शोध प्रवृत्ति में लिखा है कि काव्यशास्त्र शोध क्षेत्र को 3 वर्गों में बांट जा सकता है –

1. भारतीय काव्यशास्लीय अध्ययन
2. भारतीय और पाश्चात्य काव्यशास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन
3. किसी कृति का काव्य शास्त्रीय अध्ययन

1. भारतीय काव्यशास्त्र के अध्ययन के अंतर्गत अलंकार रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि, रस, औचित्य नायक संप्रदायों का अलग–अलग विकासात्मक अध्ययन और मूल्यांकन किया जा सकता है

- सभी भारतीय काव्यशास्त्र के सिद्धांतों के रस सिद्धांतों के रस चिंतन का तुलनात्मक अध्ययन कर सकते हैं
- भारतीय काव्यशास्त्र सिद्धांतों का तुलनात्मक अध्ययन
- भारतीय काव्यशास्त्र की दृष्टि में काव्य का स्वरूप
- भारतीय काव्यशास्त्र चिंतन के दो सीमांत लोक और अध्यात्म

रस सिद्धांत का सौंदर्यशास्त्र, मनोविज्ञान, नीति शास्त्र, संस्कृति आदि आनंद विधावर्ती दृष्टियो से अध्ययन (यथा– रस और सौंदर्यशास्त्र, रस और मनोविज्ञान आदि)

भारतीय काव्यशास्त्र संप्रदाय के विकास का वैज्ञानिक इतिहास (भारतीय काव्यशास्त्र का वैज्ञानिक इतिहास)

2. भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र के तुलनात्मक के अध्ययन अंतर्गत विभावन व्यापार और काव्य बिंब को शोध विषय बनाया जा सकता है

- साधारणीकरण और संप्रेषगुणीयता का सिद्धांत
- रीति सिद्धांत और शैली विज्ञान
- ध्वनि सिद्धांत और प्रतीक योजना
- भारतीय तथा पाश्चात्य काव्य की दृष्टि में काव्य का स्वरूप (काव्यानुभूति, काव्य भाषा, काव्य प्रयोजन आदि)
- भारतीय काव्यशास्त्र चिंतन पर पाश्चात्य काव्यशास्त्र का प्रभाव
- भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन

2. किसी कृति काव्यशास्त्र की दृष्टि से अध्ययन के अंतर्गत किसी एक रचना या किसी एक कवि को आधार मानकर उस रचना या उस कवि की कृतियों का काव्यशास्त्र अध्ययन किया जा सकता है। जैसे– संस्कृत साहित्य के शोधार्थियों के लिए अनुकूल शोध विषय–अंबिकादत्त व्यास कृत शिवराज विजयरू रस सिद्धांत, रामायण में बिंब विधान, इसी प्रकार हिंदी साहित्य के क्षेत्र में धर्मवीर भारती के काव्य मैं पति की योजना, बिहारी सतसई में वक्रोक्ति, साकेत में बिंब विधान आदि। काव्य शास्त्रीय शोध की पद्धति सामान्य शोध पद्धति से भी नहीं है यह भी तथ्य संकलन, वर्गीकरण, विश्लेषण और निष्कर्षण की प्रक्रियाओं पर आश्रित हैं।

भाषा वैज्ञानिक शोध

भाषा और विज्ञान इन दो शब्दों के योग से भाषा विज्ञान नाम निष्पन्न हुआ है। भाषा विज्ञान भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करता है। भाषा वैज्ञानिक शोध पद्धति यह शोध की शास्त्रीय पद्धति है। इसके अंतर्गत भाषा की संरचना का अध्ययन और विश्लेषण किया जाता है।[9]

डॉ. श्यामसुंदर दास – भाषा विज्ञान और शास्त्र को कहते हैं जिसमें भाषा शास्त्र के विभिन्न अंगों और स्वरूपों का विवेचन तथा निरूपण किया जाता है।[10]

डॉ. देवेंद्र नाथ शर्मा ने भाषा विज्ञान की भूमिका में पृष्ठ 176 पर लिखा है कि भाषा विज्ञान का सीधा अर्थ भाषा काविज्ञान और विज्ञान का अर्थ विशिष्ट ज्ञान। इस प्रकार भाषा का विशिष्ट ज्ञान भाषा विज्ञान कहलाएगा। जिसके अंदर भाषिक अध्ययन के सभी पक्ष और पद्धतियां समाविष्ठ है।

भारत में भाषा शास्त्रीय चिंतन का विकास वैदिक काल से ही हो गया था। वेदों के उपरांत छरू वेदांगों – शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद और ज्योतिष में से शिक्षा, व्याकरण और निरुक्त का सीधा संबंध भाषा विज्ञान से है। शिक्षा का संबंध ध्वनि विज्ञान से है। शिक्षा वेदांग में

स्वरों और व्यंजनों के उच्चारण का बोध कराया गया है।' व्याकरण" नामक वेदांग में पद विज्ञान और वाक्य विज्ञान पर प्रकाश डाला गया है तथा निरुक्त में शब्दों की व्युत्पत्ति का विवेचन है। वेदांगों के अतिरिक्त भाषा विज्ञान के विकास में योगदान देने वाले ग्रंथ प्रतिशाख्य हैं।

संस्कृत विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक भाषा है। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि भारत के प्राचीन व्याकरण आचार्यों की तुलना में यूनान के प्राचीन भाषा शास्त्रियों का चिंतन पर्याप्त अविकसित और अवैज्ञानिक था। इस तथ्य की पुष्टि जैस्पर्सन के निम्नलिखित कथनों से होती है–

"Science presupposes careful observation and systemetion on Language, we find very little. The earliest masters in linguistic observation and classification are that old Indian Grammarians."

अर्थात् विज्ञान की प्रार्थना आवश्यकता है तथ्यों का शतक निरीक्षण और व्यवस्थित वर्गीकरण, जिसका भाषा के विषय में लिखने वाले यूनानी यों में बहुत ही कम अंश है। मासिक निरीक्षण और वर्गीकरण के क्षेत्र में तो भारत के प्राचीन वैयाकरणिक ही सबसे पहले मर्मज्ञ थे।[11]

भारत में संस्कृत, ग्रीक, लैटिन आदि प्राचीन भाषाओं की तुलना को ध्यान में रखकर सर विलियम जोंस ने जिस तुलनात्मक भाषा विज्ञान का सूत्रपात किया था। उसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए विशप कोल्ड वेल जिन्होंने 1856 में द्रविड़ भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण लिखा। इनके बाद जॉन बीम्स आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन कर व्याकरण लिखा। इनके बाद जॉन बीम्स ने आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन कर व्याकरण लिखा। इस प्रकार भारतीय वैज्ञानिकों की सुधीर की परपरा में हिंदी तथा हिंदी की विभिन्न बोलियों के संबंध में डॉ. बाबूराम सक्सेना, डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी, श्री कामता प्रसाद गुरु, आचार्य केशवदास वाजपैई, डॉ. भोलानाथ तिवारी आदि ने अहम भूमिका निभाई। भाषा वैज्ञानिक शोध तीन प्रमुख धुरियों के आस–पास टिका हुआ है।

- एक किसी भी भाषा का वर्णनात्मक ऐतिहासिक अध्ययन केवल भाषा से संबंधित होता है क्योंकि यह प्रदत्त समय पर होता है, ऐतिहासिक अध्ययन भाषा या भाषाओं के समूह के इतिहास और उसमें क्या कुछ संरचनात्मक बदलाव आए हैं, इनसे संबंधित होता है।
- सैद्धांतिक और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान किसी भाषा के चित्रण हेतु ढांचा सर्जन के साथ–साथ भाषा के सार्वभौम पहलुओं के बारे में सिद्धांतों से संबंधित होता है, दूसरी तरफ अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान क्रिया पारस्परिक क्रिया का भाषा विज्ञान है तथा यह अपने आप में ही एक विषय क्षेत्र है।
- प्रासंगिक और स्वतंत्र भाषा विज्ञान – प्रासंगिक भाषाविज्ञान इस बात से संबंधित होता है की भाषा किस तरह विषय में उपयुक्त बैठती है, इसके विपरीत स्वतंत्र भाषा में भाषाओं पर उनके अपने लिए और भाषा से संबंधित बाह्यताओं के बगैर विचार किया जाता है।[12]

भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के चार प्रमुख पद्धतियां है – वर्णात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक और प्रायोगिक[13]

1. वर्णात्मक –

किसी भाषा के किसी एक समय में प्राप्त स्वरूप का ध्वनि, पद, वाक्य एवं अर्थ की दृष्टि से किया गया भाषिक अध्ययन ही विवरणात्मकध्वर्णात्मक अध्ययन कहलाता है। आचार्य पाणिनी को अष्टाध्यायी इस पद्धति का उत्तम उदाहरण है।[14]

2. ऐतिहासिक

ऐतिहासिक भाषा विज्ञान में यह पता लगाया जाता है कि किसी भाषा में समयानुसार कई बार सदियों के बाद और कई बार स्थान विशेष के बाद कैसे बदलती है। भारतवर्ष में एक कहावत प्रसिद्ध है –

"कोस कोस पर बदले पानी चार कोस पर वाणी"[15]

देश में हर कोस की दूरी पर पानी का स्वाद बदल जाता है और चार कोस पर भाषा अर्थातरू वाणी भी बदलती है। इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए ऐतिहासिक पद्धति के द्वारा किसी भाषा के प्राचीन से लेकर अर्वाचीन काल तक के काल क्रमिक विकास का ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ आदि सभी भाषिक घटकों की दृष्टि से क्रम बद्ध अध्ययन किया जाता है। ऐतिहासिक पद्धति से किसी भाषा की संरचना में विभिन्न कालों में घटित घटिया परिवर्तनों को भली–भांति समझा जा सकता है। ऐतिहासिक पद्धति का मूल आधार भी वर्णात्मक पद्धति है। भाषा परिवारों के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन भी ऐतिहासिक पद्धति से किया जाता है।

3. तुलनात्मक पद्धति

तुलनात्मक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन में किसी एक ही भाषा परिवार की दो या दो से अधिक भाषाओं के ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ के आधार पर संरचनात्मक तुलना की जाती है। यह तुलनात्मक अध्ययन भाषाओं के प्राचीन एवं अर्वाचीन रूपों का भी हो सकता है। तुलनात्मक पद्धति से भाषाओं के संरचनात्मक साम्य– वैषम्य का बोध होता है। भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण का आधार वास्तव मैं तुलनात्मक अध्ययन ही है।

4. प्रायोगिक पद्धति

वर्तमान काल में भाषा शिक्षण मैं प्रायोगिक पद्धति अत्यधिक उपयोग में लाई गई है। कुछ दशकों में यूरोप, जापान, अमेरिका आदि में बहुत लोकप्रिय सिद्ध हुई है। नूतन भाषा शिक्षण के लिए भाषा शिक्षण प्रयोगशाला का उपयोग किया जाता है। प्रयोगशाला में ग्रामोफोन, रेडियो, टेलीविजन, टेप रिकॉर्डर, सुर विश्लेषक आदि शिक्षण मंत्रों की सहायता से भाषा सिखाई जाती है। किसी क्षेत्र की विशिष्ट बोली की शब्दावली के अर्थ वैज्ञानिक अध्ययन के माध्यम से उस क्षेत्र के संस्कृति का प्रामाणिक अध्ययन प्रस्तुत किया जा सकता है।

शैली वैज्ञानिक शोध[16]

शैली और विज्ञान, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है शैली का विज्ञान अर्थातरू जिस विज्ञान में शैली का वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित रूप में अध्ययन किया जाए वह शैली विज्ञान है।

शैली विज्ञान भाषा विज्ञान एवं साहित्य शास्त्र दोनों की सहायता लेता हुआ भी दोनों से अलग स्वतंत्र विज्ञान है। शैली विज्ञान एक और भाषा शैली का अध्ययन साहित्य शास्त्र के सिद्धांतों के आधार पर करता है जिसमें रस, अलंकार, ध्वनि, रीति, वक्रोक्ति, शब्द शक्ति, गुण, दोष, प्रतीक वृति आदि आते हैं वहीं दूसरी ओर शैली विज्ञान के अंतर्गत भाषा शैली का अध्ययन भाषा विज्ञान के सिद्धांतों के आधार पर किया जाता है जिसमें भाषा की प्रकृति और संरचना के अनुशीलन को महत्व दिया जाता है।

शैली विज्ञान के अध्ययन की मुख्यतः दो धाराएं प्रचलित है –

1. साहित्य शास्त्र के आधार पर

इसमें किसी कवि, कृति या लेखक की शैली का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है यथा – अलंकार, रस, रीति, गुण दोष, वक्रोक्ति, वृत्ति प्रवृत्ति, छंद बिंब आदि के आधार पर देखा जाता है कि लेखक या कवि ने साहित्य शास्त्र के सिद्धांत का अनुसरण करते हुए अपनी कृति की रचना की है या नहीं। इस प्रकार का अध्ययन साहित्य शास्त्र के क्षेत्र की विषय वस्तु मानी जा सकती है।[17]

2. भाषा विज्ञान के आधार पर

किसी कवि या रचना में प्रयुक्त भाषा की प्रकृति और संरचना के तत्वों का वैज्ञानिक विश्लेषण करते हैं। प्रकृति की संरचना के आधार पर भाषा के पांच तत्वों – ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य और अर्थ के आधार पर देखा जाता है कि कवि की भाषा में कहां ध्वनि चयन, ध्वनि विचलन, ध्वनि समानांतर किया गया हैद्य इसी प्रकार शब्द स्तर, रूप स्तर, वाक्य स्तर एवं अर्थ के स्तर पर अध्ययन किया जा सकता है। वाक्यों में लोकोक्तियों, मुहावरों के विचलन का भी अध्ययन किया जा सकता है।

पाठानुसंधान

पाठानुसंधान में जब किसी कृति कार की 100 हस्तलिखित मूल पांडुलिपि उपलब्ध नहीं होती तथा समकालीन या परवर्ती प्रतिलिपिकारों के द्वारा तैयार की गई मूल पांडुलिपि की प्रतिलिपि यही प्राप्त होती है। आदर्श प्रतिलिपि वही मानी जाती है जो मूल पांडुलिपि की अक्षरशरू शुद्ध नकल हो। इसके लिए प्रतिलिपि कार में भाषा और विषय की गंभीर जानकारी भी अपेक्षित मानी गई है।

पाठानुसंधान का कार्य अन्य प्रकार के शोध कार्यों से स्वरूपतरू भिन्न होने के कारण शोधक में भी भिन्न प्रकार की प्रतिभा की क्षमताओं के अपेक्षा करता है। यह कार्य स्थाई महत्व का है जो अनेक भावी अनुसंधानों के लिए मूल्यवान शोध्य सामग्री प्रस्तुत करता है। इससे एक तिरोहित होती रचना का उद्धार होता है तथा विलुप्त होता हुआ रचनाकार प्रकाश में आता है । अतः यह कार्य ऐतिहासिक महत्व का है।[18]

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि साहित्यिक शोध के विभिन्न आयामों, पद्धतियों के माध्यम से अनुसंधानकर्ता को शोध के लिए नए विषय के लिए पृष्ठभूमि तैयार करने और शोध प्रविधि का चयन करने में सहायता प्राप्त होगी। साथ ही साहित्यिक शोध का मनोविज्ञान, राजनीतिक शास्त्र, सौंदर्यशास्त्र, दर्शन आदि अन्य दृष्टियां भी यथा स्थान अभिव्यक्ति का माध्यम

होती है। इस प्रकार शोधक कृति में निहित समग्र जीवन दर्शन को भी अपने शोध का आधार बना सकता है और किसी एक दृष्टि को भी।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1. साहित्य दर्पण प्रथम परिच्छेद
2- https://testbook-com
3. Hindi Chetan Bharti An Educational Blog.
4. शोध प्रविधि – डॉ. हरिश्चंद्र शर्मा – हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकुला
5. शोध प्रविधि – डॉ. हरिश्चंद्र शर्मा – हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकुला
6. शोध प्रविधि – पेज न. – 57
7. hi-m-wikipedia-org
8. शोध प्रविधि – पेज न. – 61
9- hi-m-wikibooks-org
10. हिंदी व्याकरण और भाषाविज्ञान डॉ. ज्ञानशंकर पाण्डेय– रवि प्रकाशन सी– 217 निरालानगर लखनऊ
11. शोध प्रविधि – पेज न. – 65
12. ब्रजेश प्रियदर्शी – भाषा विज्ञान के क्षेत्र में रजगार के अवसर
13. शोध प्रविधि – डॉ. हरिश्चंद्र शर्मा – हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकुला
14. शोध प्रविधि – डॉ. हरिश्चंद्र शर्मा – हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकुला
15- https://hi-quara-com
16. hi-m-wikipedia-com
17. शोध प्रविधि – डॉ. हरिश्चंद्र शर्मा – हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकुला
18. शोध प्रविधि – पेज न. – 82
19. भाषा अनुसन्धानः सांस्कृतिक सन्दर्भ– डॉ. गोरख काकडे सरस्वती भुवन कला, वाणिज्य महाविद्यालय, औरंगाबाद
20. भाषा वैज्ञानिक अनुसन्धान और सामाजिक उपादेयता – डॉ. वसंत मोरे

पवित्रता की प्रतीक मां गंगा को अविरल निर्मल एवं स्वच्छ बनानें में युवाओं की भूमिका

इंदुजा दुबे

शोध छात्र संस्कृत विभाग
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट, सतना (मध्य प्रदेश)

डॉ अतुल कुमार दुबे

असिस्टेंट प्रोफेसर,
विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
हर्ष विद्या मंदिर पी.जी. कॉलेज,
रायसी, हरिद्वार (उत्तराखंड)

गायत्री छन्दसां माता, लोकस्य जहान्वी।
उभेते सर्वपापानां, नाशकारणतां गते।।

शोध सारांश– गायत्री वेदों की माता और लोकमाता गंगा जी हैं, ये दोनों सब पापों का नाश करने वाली हैं। गंगा महज एक नदी ही नहीं है, इसको हम माँ ऐसे ही नहीं मानते यह भारत की पहचान है एवं करोड़ों लोगों की जिसमे भारतीय ही नहीं वरन विदेशी नागरिकों की आस्था का केंद्र भी है। प्रारंभ में हिमालय से दो नदियाँ अलखनंदा व भागीरथी निकलती हैं। अलखनंदा की सहायक नदी धौलीगंगा, विष्णुगंगा तथा मन्दाकिनी हैं। भागीरथी गोमुख नामक स्थान से 25 किमी० लम्बे गंगोत्री हिमनद से निकलती है। भागीरथी और अलखनंदा देव प्रयाग में आकर मिलती है और यहाँ से आगे का सफर गंगा के नाम से होता है। हरिद्वार में पहली बार गंगा पहाड़ से निकालनें के बाद मैदानी क्षेत्र में प्रवेश करती है। मैदानी इलाके से होकर बहती हुई गंगा बंगाल की खाड़ी में बहुत सी शाखाओं में विभाजित होकर मिलती है। गंगा और बंगाल की खाड़ी के इस मिलने वाले स्थान को सुंदरवन के नाम से भी जाना जाता है। जो विश्व की बहुत सी प्रसिद्ध वनस्पतियों और बंगाल टाइगर का निवास स्थान भी है।

गंगाजल पवित्रता का प्रतीक है हमारे पवित्र ग्रन्थ और महापुरुषों ने भी गंगा की गुणवत्ता का बखान किया है। भारत ही नहीं, और केवल हिन्दू धर्म में ही नहीं, अपितु अनेक धर्म और देशों के धर्मात्मा विद्वानों ने भी गंगाजल के अध्यात्मिक गुण और प्रभावों की गाथा गाई है। जिस स्थान से गंगा उद्गम हुआ है, वह उन ऋषि–महात्माओं के तपोभूमि है, जो भारत ही नहीं वरन

विश्व की आध्यात्मिक चेतना के सूत्रधार हैं। निस्संदेह उस स्थान की आध्यात्मिक चेतना गंगाजल के साथ प्रवाहित होती है।

महर्षि भागीरथ ने अपने प्रचंड तप से जिस भागीरथी को स्वर्ग से उतरकर धरती पर प्रवाहित होने के लिए राजी किया था, वह तब से लेकर अब तक अनगिनत लोगों का उद्धार करती आ रही है। गंगा एक धारा ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत की जीवनधारा अर्थात जीवनरेखा है, जो लगभग आधे देश को पोषण प्रदान करती है। हमारे धर्म अलग हो सकते है, संप्रदाय अलग हो सकते हैं, हमारी सोच अलग हो सकती है लेकिन हम सभी का उद्देश्य एक ही है की किसी भी तरह माँ गंगा को प्रदूषित होने से बचाया जा सके। हम युवाओं को गंगा को अविरल और निर्मल करने बनाने में अपनी भूमिका सुनिश्चित करनी ही होगी नहीं तो हमारी आने वाली पीढ़ी हमें कभी माफ नहीं करेगी।

प्रस्तुत शोध पत्र में प्राचीन भारत में गंगा के उद्‌गम स्थान और समय से लेकर हमारे वेदों में, पुराणों में, महाभारत आदि में जल एवं प्रकृति प्रदत्त निशुल्क प्राकृतिक संसाधनों का क्या महत्व है का वर्णन किया गया है। इसके आलावा अभी की स्थिति का संक्षेपतः अध्ययन एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष में करते हुए आज के समय में हम युवाओं की क्या भूमिका गंगा को बचाने में हो सकती है, और माँ गंगा के प्रति हमारी संवेदना कैसी होनी चाहिए, एक माँ को अपनी संतान से क्या अपेक्षाएं होती है इन्हीं सब बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए इस शोध पत्र को लिखने का प्रयास किया गया है।

आपो हिस्ठा मयोभुवस्था न ऊर्जे दधातन महे रणाथ चक्षसे।।

भावार्थ– हे जल! आपकी उपस्थिति से वायुमंडल बहुत तरोताजा है, और यह हमें उत्साह और शक्ति प्रदान करता है। आपका शुध्द सार हमें प्रसन्न करता है, इसके लिए हम आपका आदर करते हैं।

आयुर्वेद में गंगाजल को शारीरिक और मानसिक रोगों का निवारण करने वाला और आरोग्य तथा मनोबल बढ़ाने वाला बताया गया है।

गंगा वारि सुधा समं बहु गुण पुण्यं सदायुष्करं, सर्व व्याधि विनाशनम् बलकरं वीर्यं पवित्र परम।।
हद्यम दीपन पाचनं सुरुचिरम्मिष्टम् सु पथ्यं लघु–स्वांतध्वान्त निवारि बुद्धि जननं दोष त्रघनं वरंम।।

अर्थात गंगा का जल अमृततुल्य, बहुगुणयुक्त, पवित्र, उत्तम, आयु, को बढ़ाने वाला, सर्व रोगनाशक, बलवीर्य वर्धक, परम पवित्र, हृदय को हितकर, दीपन–पाचन को बढ़ाने वाला, रुचिकारक, मीठा, उत्तम पथ्य होता है तथा लघु और भीतरी दोषों का नाशक, बुद्धि जनक, तीनों दोषों का नाश करने वाला सब जलों में श्रेष्ठ है।

–वांग्मय क्र. 34, प्र. 4.213–216

भगवान के सर्वोत्तम व्यक्तित्व का अपने भक्त के लिए जो प्रसाद है वह है गंगा जलय मन वह जो भगवान के श्री चरणों में निमग्न होय भगवान हरि का वह दिन– एकादशी, ये सब पवित्र हैं और पवित्र करने वाले हैं।

–स्कंद पुराण

"भारत महान है, हिमालय महान है, परन्तु वह क्षेत्र हिमालय में जहाँ गंगा का जन्म हुआ विशेषतः महान है, क्योंकि वह स्थान वह है जहाँ गंगा भगवान् के चरणों में रहती है।"

–स्कंद पुराण

गंगा एवं हिमालय एक दुसरे से अविछिन्न रूप से जुड़े हैं। देवात्मा हिमालय एवं भागीरथी दोनों का इतिहास जहाँ तक ज्ञात हो पाया है, यही बताता है कि दोनों ने मिलकर श्रष्टि के आदि से अब तक ब्रह्त्तर भारत को सम्रद्ध संपन्न बनाने में नहीं, आस्था उन्नयन में भी महती भूमिका निभाई है। भारतीय संस्कृति का प्रथम मन्त्र गंगा का मन्त्र है। गंगा के किनारे ही पहला मंदिर बना था।

बंगला के प्रसिद्द कवी श्रीयुत द्विजेन्द्रलाल राय ने भारतीय आत्मा की अंतिम श्रध्दा व्यक्त करते हुए भावपूर्ण शब्दों में लिखा है–

परिहरि भव सुख दुःख जे खल, माँ शापित अंतिम शपन।।
वरषि श्रवणे तव जल कल–कल, वरषि सुप्ति मम नयन।।
वरषि शान्तिमम शंकित प्राणे, वरषि अमृत मम अंगे।।
माँ भागीरथी जहान्वी सुरधुनि, माँ कल्लोलिनी गंगे।।

अर्थात, हे कल्लोलिनि गंगे! तुम जन्म–जन्मान्तरों के दुखों को दूर करने वाली हो। अंतिम समय में मेरे शंकित मन और प्राणों को शान्ति और तृप्ति प्रदान करो। अपने अमृतमय जल की हमारे सम्पूर्ण अंगों में वर्षा करो।

कवियों और शास्त्रकारों द्वारा अभिव्यक्त इस श्रद्धा के पीछे कोई निराधार कल्पनाएँ और भावुकता नहीं हो सकतीं। किसी भी तत्व के प्रति हमारी अगाध श्रध्दा उसकी उपयोगिता और वैज्ञानिक गुणों के आधार पर ही हो सकती है। गंगाजल में ऐसे उपयोगी तत्व और रसायन पाए जाते है, जो मनुष्य की शारीरिक विकृतियों को ही नष्ट नहीं करते विशेष आत्मिक संस्कार जाग्रत करने में भी वे समर्थ हैं, इसलिए गंगाजल के प्रति इतनी श्रध्दा हमारे पुराणों, शास्त्रों आदि में हमारे ऋषियों ने व्यक्त की है। वैज्ञानिक परीक्षणों से भी यह बातें अब स्पष्ट होती जा रहीं है।

प्राचीन काल में जब भारत का अरब, मिश्र और यूरोपीय देशों से व्यापार चलता था, तब भी और इस युग में भी सभी देशों के नाविक गंगा की गरिमा और पवित्रता मानते रहे है। डॉ नेल्सन ने लिखा है कि गंगा नदी का जो जल भारत से जहाजों में ले जाते है वह लन्दन पहुँचने तक खराब नहीं होता, परन्तु टेम्स नदी का जो जल लन्दन से जहाजों में भरा जाता है, वह बम्बई पहुँचने के पहले ही खराब हो जाता है।

फ्रांस के प्रसिद्ध डॉ0 डी हेरेल ने जब गंगाजल की इतनी प्रशंसा सुनी तो वे भारत आये और वैज्ञानिक परीक्षण किया। उन्होंने पाया कि इस जल में संक्रामक रोगों के कीटाणुओं को मारने की अदभुत शक्ति है। डॉ हेनकेन आगरा में गवर्नमेंट साइंस डिपार्टमेंट में एक बड़े अफसर थे। प्रयोग के लिए उन्होंने जो जल लिया, वह वह जल वाराणसी के उस स्नान घाट का था, जहाँ बनारस की गन्दगी गंगाजी में गिरती है। परीक्षण से पता चला कि उस जल में हैजा के लाखों कीटाणु भरे पड़े हैं। 6 घंटे तक जल रखा रहा, उसके बाद दुबारा जाँच की गयी तो पाया कि अब उसमे कीड़ा नहीं है, जल पूर्ण शुद्ध है, हैजे के कीटाणु अपने आप मर चुके हैं।

यह घटना अमेरिका के प्रसिद्ध साहित्यकार मार्कट्वेन को आगरा प्रवास के समय ब्योरेवार बताई गयी, जिसका उन्होंने भारत यात्रा–वृतांत में जिक्र किया है। इस प्रयोग का वर्णन प्रयाग

विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र के अध्यापक पंडित दयाशंकर दुबे, एम.ए., एल.एल.बी. नें भी अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'श्री गंगा रहस्य' में किया है।

बर्लिन के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ0 जे. ओलिवर ने तो भारत की यमुना, नर्मदा, रावी, ब्रहम्मपुत्र, आदि अनेक नदियों की अलग अलग जाँच करके उनकी तुलना गंगाजल से की और बताया कि गंगा का जल न केवल इन नदियों की तुलना में श्रेष्ठ है, वरन संसार की किसी भी नदी में इतना शुध्द कीटाणुनाशक और स्वास्थ्यकर जल नहीं होता।

"यदि एक जीव एक तरफ तपस्या से, त्याग से, बलिदान से, जिसकी प्राप्ति में समर्थ है, तो दूसरी तरफ निस्संदेह केवल भागीरथी–गंगा के किनारे रहने और स्नान करने मात्र से वह प्राप्त होता है।"

महाभारत, अनुशासन पर्व, अध्याय 27, श्लोक 26

धर्म ही नहीं किन्तु आयुर्वेद की दृष्टि से भी गंगाजल में जो गुण पाए जाते है, उन्हें देखकर भी चकित रह जाना पड़ता है। चरक ने जिसका काल आज से दो वर्ष पूर्व है– गंगाजल को पथ्य माना और कहा भी है कि– "औषधि जहान्वी तोयं" अर्थात "गंगाजल औषधि है।", इसके सामान संसार की कोई औषधि नहीं है। चक्रपाणि दत्त ने 1060 वर्ष पूर्व ही खोज करके बताया था कि गंगाजल स्वास्थ्यवर्धक है। "भंडारकर ओरिएंटल इंस्टिट्यूट" में एक प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ है, "भोजन कौतूहल"। उसमे गंगाजल की उपयोगिता बताते हुए लिखा है– गंगाजल श्वेत, स्वादु, स्वच्छ, रुचिकर, पथ्य, भोजन पकाने योग्य, पाचक, शक्ति बढ़ाने वाला, और बुद्धि को तीव्र करने वाला है।

गंगा के आध्यात्मिक परिचय के साथ–साथ भौतिक परिचय भी कम महत्व का नहीं है। वह अनेक वह अनेक नदियों का सहयोग अपनें में समन्वित कर सकने में सफल हुई है, अर्थात उसका गौरव इसमें भी है कि उसनें अपनें में एक बड़ा परिवार घुलाया और आत्मसात किया है। गंगा में कितनी ही छोटी–बड़ी नदियाँ मिलती हैं। इनमें से कितनी ही उल्लेखनीय हैं। यथा– नन्दप्रयाग में विष्णु गंगा, स्कंद प्रयाग में पिंडर, रूद्र प्रयाग में मन्दाकिनी, देवप्रयाग में अलकनंदा, प्रयाग में यमुना, आगे चलकर गोमती, घाघरा, गण्डक, कोसी, सरयू, ब्रह्मपुत्र, रामगंगा, बागमती, महानंदा जैसी बड़ी नदियाँ उसी में जा मिलती हैं।

गंगा तट पर मैदानी इलाके में काशी और प्रयाग तीर्थ प्रसिद्ध हैं। हिमालय क्षेत्र में कई काशी और कई प्रयाग हैं जैसे– गुप्तकाशी, उत्तरकाशी, रुद्रप्रयाग, विष्णुप्रयाग, सोनप्रयाग, देवप्रयाग, कर्णप्रयाग, नन्दप्रयाग आदि।

गंगा का कुल जल ग्रहण क्षेत्र 10 लाख 80 हजार वर्ग किलोमीटर है। गंगा नहरों से इन दिनों लगभग 6 लाख 95 हजार हेक्टेयर भूमि की सिंचाई भी होती है।

जैव विविधिता की बात करें प्रथ्वी पर जितने नदी क्षेत्र हैं, उनमें सबसे अधिक लोग गंगा क्षेत्र में निवास करते हैं। 100 में से 43 भारतीय इस क्षेत्र में निवास करते हैं। गंगा के इस विचित्र परिपथ पर जीवों और वनस्पतियों की अतुलनीय प्रजातियाँ हैं। इसके परिपथ पर नाना प्रकार के पक्षी, घड़ियाल, मगरमच्छ, मछलियाँ, कछुए, आदि पाए जाते है। गंगा तटवर्ती क्षेत्र अपनें आप में शान्त व अनुकूल पर्यावरण के कारण जैव विविधता के भंडार हैं। गंगा में पायी जानें वाली शार्क के प्रति विश्व के वैज्ञानिकों की काफी रूचि है। सबसे बड़ा डेल्टा सुंदरवन क्षेत्र विश्व की बहुत

सी वनस्पतियों और बंगाल टाइगर का गृह क्षेत्र है। गंगा प्रतिवर्ष 73 करोड़ टन मिट्टी बहाती है, जिससे इसके डेल्टा में बड़े मैन्ग्रोव वन का निर्माण हुआ है।

यहाँ पर ध्यान आकर्षित करना होगा कि मनुष्य सभ्यता की जननी से असभ्य व्यवहार क्यों कर रहा है, और कब तक करेगा? एक चीनी यात्री ने अपने यात्रा वृतांत में लिखा था कि भारत की नदियों में दूध बहता है। यह कथन भारतीय नदियों के निर्मल और पुष्टिदायक स्वरूप का प्रमाण है। परन्तु विगत वर्षों में हमने इन सरिताओं को हमने दूध तो क्या जल बहने लायक भी नहीं छोड़ा है? आज–कल नदियाँ मल–मूत्र वाहिनी बनी हुईं हैं। समझदारों की इस नासमझी पर हैरानी होती है।

औद्योगिकीकरण एवं विकास से प्रभावित तड़पती माँ गंगा (20 मार्च 2017 को आये ऐतिहासिक फैसले में उत्तराखंड उच्च न्यायालय ने गंगा को जीवित मानव का दर्जा देने का आदेश दिया) एवं उसकी सहायक नदियों में न जानें कितने प्रकार के जैसे– औद्योगिक अपशिस्ट, रासायनिक खाद, कीटनाशक, खतरनाक कचरा, फ्लाय ऐश, कचरा, प्लास्टिक, अस्पतालों का रडियोधर्मी कचरा, आदि। इसके अलावा अन्य बहुत सी परम्पराएँ जैसे पर्व स्नान, निर्माल्य (बासी फूल), शवों को प्रवाहित करना, पशुओं, वाहनों, कपड़ों की धुलाई, मूर्ति विसर्जन, उत्खनन, अतिक्रमण–भवन आदि। वर्ल्ड वाइल्डलाइफ फण्ड (WWF) 2013 के आंकड़े बताते है कि प्रदूषण के कारण 1800 डालफिन से भी कम जीवित बची हैं। प्रदूषण की चपेट में ये मरी जा रहीं है या दुर्बल होती जा रहीं हैं। जल जीवों की अनेकों प्रजातियाँ अब तक पूरी तरह से लुप्त हो चुकीं हैं। न्यूनतम जल प्रवाह एवं प्रदुषण के चलते जैव विविधता संकट में है। यहाँ पर विचार करने की बात यह है कि अगर गंगा रूठ गयी तो क्या होगा?

- रेगिस्तानी होगी 10.80 लाख हेक्टेयर भूमि।
- लगभग 48 करोड़ भारतवासी तरसेंगे बूंद–बूंद को।
- ऋतुओं का चक्र पलट जायेगा।
- अनाज की कमी अर्थात पैदावार कम होने से महंगाई दर बढेगी और लोग भूख से मरेंगे।
- कृषि, उद्योग, पशुपालन, व्यापार का होगा दिवालिया।
- मरते को अंतिम समय में नहीं उपलब्ध होगा गंगा जल, तब कैसे होगी मुक्ति?
- कैसे देंगे सत्य की दुहाई, कैसे लेंगे गंगाजल की शपथ?

नमामि गंगे जैसी योजनाओं को सिद्ध करने के लिए और मां गंगा के अस्तित्व को बचाने के लिए युवाओं सकारात्मक विचार के साथ लोगों को जागरूक करना चाहिए। केंद्र और राज्य सरकार के द्वारा औद्योगिकरण एवं अन्य प्रदूषण के स्रोतों से बचने के लिए कठोर कदम उठाए जाने चाहिए। इसके साथ–साथ सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी के माध्यम से लोगों को इस बात से अवगत कराना नितांत आवश्यक है की मां गंगा हमारे संस्कृति की धरोहर है।

अब अविलम्ब निर्णय करना ही होगा, हम गंगा को माँ मानते हैं या कूड़े–कचरे का घर। पोषण चाहते हैं या शोषण कर उसका अस्तित्त्व मिटा देना चाहते हैं।

गंगा को प्रदूषित होने से बचाने के लिए युवाओं के द्वारा किये जा सकने वाले कार्यदृ वैसे तो किसी भी काम को करने में युवाओं की भूमिका अतुलनीय होती है अर्थात किसी भी देश के विकास का आधार स्तम्भ ही युवा होते हैं और चूँकि भारत में सबसे ज्यादा युवा आबादी है। दुनियां में 121 करोड़ युवा है, इनमे सबसे ज्यादा 21ः भारतीय है और दुसरे नंबर पर चीन 14ः है (दैनिक भास्कर की रिपोर्ट)। इस आधार पर हम कह सकते है जिस देश की नसों में सबसे ज्यादा युवा खून दौड़ रहा हो वहां क्या असंभव है। गंगा में 80ः से भी ज्यादा प्रदूषण के लिए गंगा नदी और उसकी सहायक नदियों के किनारे स्थित कस्बों, शहरों से आने वाला गैर शोधित घरेलु और फैक्ट्रियों से निकलने वाला अपशिस्ट जिम्मेदार है।

वर्तमान में गंगा नदी के विकास में आज के युवाओं द्वारा उठाये जा सकने वाले कदम निम्नवत है। युवाओं के दवारा किये जाने वाले ये प्रयास गंगा नदी को पवित्र, अविरल और निर्मल बनानें में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं–

1. **ठोस अपशिस्ट प्रबंधन में युवाओं का योगदान–** हमने नदियों को कूड़ा गाड़ी और शहरों में रोड के किनारे खाली पड़े स्थानों को कूड़ा घर बना लिया है। युवाओं के लिए इस सबको रोकनें के लिये आगे आना पड़ेगा और लोगों को वैज्ञानिक तरीके से प्यार से समझाना होगा कि ये रोड साइड कूड़ा फेकने से क्या क्या हानि हमारे दैनिक जीवन में हो रही है, चाहे वो डेंगू का फैलना हो, चाहे हैजा का फैलना हो, चाहे मलेरिया का फैलना हो और चाहे भूजल का प्रदूषित होना हो या भूजल का स्तर दिन प्रतिदिन कम होना और उसकी गुणवत्ता में कमीं आना हो। ये जितना भी हमारे घरों से अपशिस्ट निकलता है चाहें वो ठोस हो या तरल हो वो अंत में किसी न किसी नदी में मिलेगा और नहर में ही और उसके बाद उस जलस्त्रोत की गुणवत्ता को कम करेगा और धीरे धीरे खतम करेगा। युवाओं के लिए इस पुनीत और पावन काम में बढ़ चढकर अपनी भागेदारी सुनिश्चित करनी होगी जैसे जो युवा गंगा किनारे ही रहते है वो एक टीम बनाकर लोगों को जागरूक कर सकते है।

एक सबसे जरुरी काम ये भी है कि घाटों के किनारे कूडेदानों की उचित व्यवस्था हो और उनको सही समय पर खाली भी कराया जाय। जिससे होता क्या है कि कभी कभी लोगों के लिए कूड़ेदान नहीं दिखाई देने पर भी या भरे हुए होने पर भी घाटों के किनारे ही हम कूड़ा, पूजा की सामग्री, पुराने कलेंडर, फोटो और आदि ऐसी सामग्री जो हमें नहीं फेकनी चाहिए वो हम फेंक देते है या गंगा जी में प्रवाहित कर देते है क्योंकि कुछ हमारे ऐसे पुराने संस्कार भी है या यहाँ रूढ़िवादिता कहें तो भी गलत नहीं होगा की पुराने कैलेंडर, फोटो, पूजा सामग्री आदि को गंगा में प्रवाहित करें तब ही हमें मुक्ति मिलेगी। जबकि ऐसा बिलकुल भी सही नहीं है एक तरफ हम गंगा को माँ कह रहे है दूसरी तरफ हम उसको अपवित्र कर रहे है। मुक्ति हमें इससे नहीं मिलेगी वरन इससे मिलेगी जब हम इसको साफ रखेगें या साफ रखने में सहयोग करेगें क्योकि जब गंगा साफ होगी तभी हम इसके जल का आचमन और स्नान कर सकेंगे और अपनें आपको पवित्र कर सकेगें। इसके लिए लोगों को जागरूक करने के लिए युवाओं की भूमिका प्रमुख हो सकती है और इसमें युवाओं को बढचढकर अपना योगदान देना चाहिए।

2. **घाटों के किनारे किनारे पौधारोपण और उनकी देखभाल में युवाओं की सक्रियता–** गंगा को प्रदुषण मुक्त करने में घाटों के किनारे पौधारोपण करना एक बहुत ही अच्छा और कारगर उपाय हो सकता है। जिसके अंतर्गत तटों पर सघन वृक्षारोपण और गौमुख से लेकर गंगासागर तक गंगा के किनारे किनारे ऐसे वृक्षों का पौधारोपण करना अर्थात हरी चूनर ओढ़ाना जो जल्दी उगें और जल प्रदुषण को भी कम कर सकें उनका वृक्षारोपण करना प्रमुख है। इस तकनीक को फायटोरिमेंडियेशन के नाम से भी जाना जाता है।

पोधारोपण करना और उनकी देखभाल करने के लिए युवाओं के लिए आना चाहिए क्योंकि पौधारोपण करने से ही काम नहीं चलता जैसे कुछ दिनों तक छोटे बच्चे की देखरेख बहुत जरुरी होती है वैसे ही पौधा लगाने के बाद उसकी देखरेख भी उतनी ही जरुरी होती है और ये काम युवा बखूबी कर सकते है।

3. **लोगों को जागरूक करने में युवाओं की भूमिका–** चूँकि युवाओं की बात सुनना सभी लोग पसंद करते है और जो शिक्षित युवा हैं या जो नहीं है उनको प्रशिक्षित करके लोगों को जागरूक करने का काम युवाओं के द्वारा किया जा सकता है जिसका प्रभाव तत्काल प्रभाव से हमें देखने को मिलेगा। इसके अलावा बच्चों बहुत से ऐसे प्रोग्राम है जिनके द्वारा समाज को जागरूक कर सकते है जैसे नुक्कड़ नाटक, फेस पेंटिंग, पोस्टर प्रतियोगिता, कोई फिल्म दिखाकर आदि।

मां गंगा के अस्तित्व को बचाने के लिए करने योग्य कार्य–

- ✓ घर की पूजन सामग्री, बासी फूल एवं अन्य सामग्री की खाद बनाएं।
- ✓ पालीथीन के स्तन पर कागज एवं कपडे के थैलों का प्रयोग करें।
- ✓ मल–मूत्र त्याग हेतु शौचालयों का प्रयोग करें।
- ✓ पर्यावरण अनुकूल मूर्तियों की ही स्थापना करें।
- ✓ रसायानिक खाद, कीटनाशक के स्थान पर गोबर, केचुआ खाद एवं गौ मूत्र से बने कीटनाशकों का ही प्रयोग करें।
- ✓ गंदे पानी के सोकपिट (शोख्ता गढ्ढा) बनायें।
- ✓ अच्छा होगा यदि मिट्टी के स्थान पर आटे के दीपक बनाकर ही दीपदान करें।

न करने योग्य कार्य–

- × घर पर कचरा युक्त पूजन सामग्री, बासी फूल गंगा में ना डालें।
- × गंगा तट पर पालीथीन का प्रयोग ना करें।
- × घाट पर नहाने एवं कपडे धोने के साबुन का प्रयोग न करें।
- × गुटखा एवं शेम्पू के पाउच तटों के किनारे ण फेंकें।
- × तटों एवं घाटों पर मॉल मूत्र का त्याग ण करें।
- × प्लास्टर ऑफ पेरिस की बनी एवं जहरीले रंगों से रंगी मूर्तियों का विसर्जन गंगा में न करें।

- × मल मूत्र युक्त पानी गंगा में ण प्रवाहित करें और न ही किसी को करने दें।
- × शहर के गंदे नालों एवं उद्योगों का गन्दा–जहरीला पानी गंगा में प्रवाहित होने से रोकें।
- × प्लास्टिक के दोनों में दीपदान न करें।
- × मृत पशु, शव, अधजले शव गंगा में प्रवाहित न करें।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1. निर्मल गंगा जन अभियान (हरिद्वार उत्तराखंड)।
2. पर्यावरण एवं वन मंत्रालय भारत।
3. प्राचीन भारत में जलविज्ञान (राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान रूड़की हरिद्वार उत्तराखंड)।
4. Rig Veda Sanhita (3000 B.C), (i) Bhasya by Maharshi Dayananda Sarswati (Hindi), Published by Dayananda Sansthan, New Delhi-5.
5. The Valmiki Ramayana (800 B.C.), Gita Pess Gorakhpur, in two volumes with hindi translation.
6. The Mahabharata (400 B.C. to A.D), translated by Pt. Ramanayaran Datta shastri, Pandeya "Ram" Gita Press, Gorakhpur in six volumes.
7. Manusmriti (200 B.C. or earlier than that), Edited by Pt. Hargovinda Shastri, Chowkhamba Sanskriti Series Office, Varanasi-221001, 1984.
8. Narada Purana, lbid., 1984.
9. Padma Purana, lbid., 1986
10. Skanda Purana, (7th Century A.D.), lbid. 1988.
11. Vishnu Purana: Same as 24th above, 1989.
12. Sam Veda (3000 B.C.) Bhasya by Swami Dayananda Sarswati, Published by Dayananda Sansthan, New delhi-5.
13. Yajur Veda (later than Rig Veda), Bhasya by Swami Dayananda Sarswati, Published by Dayananda Sansthan, New delhi-5.
14. Atharva Veda (the latest Veda), Bhasya by Pt. Khem Karan Das Trivedi

A Study of Performance Appraisal System and Its Impact on Employee Satisfaction and Employee Motivation in Higher

Anuj Kumar Singh

Research Scholar,
Commerce Department
Nehru Gram Bharati (Deemed to be University),
Prayagraj

Dr. Ashish Kumar Shukla

Associate Professor,
Commerce Department
Nehru Gram Bharati (Deemed to be University),
Prayagraj

Abstract: The general objective of the study is to determine the role of performance appraisal and its impact on employee satisfaction and motivation in higher education. The study is guided by the following specific objectives: to establish the extent to which performance appraisal process affects employee motivation, to determine the extent to which appraisers affect employee motivation and to determine the challenges in appraising employee performance. The study adopted descriptive research design. The population of interest consists of employees of higher education in Prayagraj. Data is collected using structured questionnaires and additional qualitative data is collected using the reference from the questionnaire and the objectives of the study. The data is analysed using statistical tools such as frequency distribution, percentages and Pearson correlations. The research findings suggest that regular assessment of performance leads to employee motivation. Performance appraisal rating can be considered as a technique that has a positive effect on work performance and employee motivation. Employees may be motivated if the appraisal process is based on accurate and current job descriptions.

Keywords: Performance appraisal; motivation; performance; employee satisfaction.

Introduction

This research paper explores the intricate relationship between the performance appraisal system and its influence on employee satisfaction and motivation within the context of higher education institutions. With the dynamic nature of academia and the evolving expectations placed on educators and staff, understanding the effectiveness of performance appraisal systems becomes crucial for organizational success.

With the rapid development and growth of organization, both in terms of its operations as well as the growing needs of the employees, it is quite normal for an organization to want to appraise its employee's performance. Traditionally, performance appraisals are conducted in a timely manner in order assess growth and progress of the employees in their work and job roles. Due to this, it is often linked to employee benefits as well as growth and promotion schemes by the organizations. While many organizations provide benefits or promotions based on the result of these appraisals, most of them unconsciously ignore the crucial connection of these appraisals with employee motivation and satisfaction.

Performance Appraisal System

Performance appraisals are comprised of preset standards which are used to measure employees' work behavior and the results are provided as feedback for the employee. An appraisal system helps institutions with the decision-making process involved in employee promotion and compensation, or perhaps in an unfortunate situation, termination. A performance appraisal system falls under the umbrella of performance management software and these platforms are typically used in conjunction with each other.

In short, A performance appraisal system is a structured process used by organizations to assess and evaluate the job performance of their employees. The primary goal of this system is to provide feedback, recognize achievements, identify areas for improvement, and make decisions related to promotions, rewards, or training needs. Here are key components and considerations in designing a performance appraisal system:

Clear Objectives: Define the purpose and objectives of the performance appraisal system. It could include employee development, goal alignment, and determining compensation or promotions.

Performance Criteria: Establish clear and measurable performance criteria relevant to each job role. These criteria should align with the organization's goals and values.

Goal Setting: Encourage employees and managers to set specific, measurable, achievable, relevant, and time-bound (SMART) goals that align with organizational objectives.

Regular Feedback: Implement a system of regular feedback throughout the year, not just during formal appraisal periods. This fosters continuous improvement and communication between employees and managers.

360-Degree Feedback: Consider incorporating feedback from multiple sources, including peers, subordinates, and customers, to provide a comprehensive view of an employee's performance.

Self-Assessment: Allow employees to self-assess their performance. This can provide insights into their own perspectives and areas they feel require improvement.

Training and Development Plans: Identify training and development needs based on the appraisal results to help employees enhance their skills and competencies.

Fair and Objective Evaluation: Ensure that the appraisal process is fair, unbiased, and based on objective criteria. This may involve training managers on conducting evaluations and minimizing personal biases.

Documentation: Maintain accurate and detailed records of employee performance, achievements, and areas for improvement. This documentation serves as a basis for decision-making and can be valuable during performance discussions.

Performance Ratings or Rankings: Develop a clear rating or ranking system to quantify and communicate performance levels. This helps in making consistent decisions regarding promotions, salary adjustments, or other rewards.

Employee Involvement: Involve employees in the appraisal process by encouraging them to provide input, share their perspectives, and discuss their career aspirations.

Continuous Improvement: Regularly review and update the performance appraisal system to ensure its effectiveness in meeting organizational goals and adapting to changing business environments.

A well-designed performance appraisal system contributes to employee satisfaction, professional growth, and organizational success by aligning individual efforts with the overall objectives of the company.

Stages of Performance appraisal system:

1. Defining the objectives: Firstly, the objectives of the appraisal has to be defined clearly, this is because an appraisal can be done to motivate an employee or to control their behaviour. In each case the emphasis of appraisal differs. For example, salary and promotion are reward providing appraisal and this differs from appraisal of training and development.

2. Defining appraisal norms: performance appraisal is one of long term objectives of the organization. Therefore, performance norms have to be specified at the beginning of the year and the standards of performance should be jointly determined by the appraiser and appraise. While defining the norms, there should be provision for revision of performance norms mid-way, as there may be many uncontrollable factors which may affect the performance of the employee. For example: Pepsi co. evaluates performance norms for its managers two or three times in a year to make it more meaningful.

3. Designing the appraisal program: while designing the appraisal program, issues such as the type of personnel to be appraised, the appraisal methodology to be used and the timing of appraisal have to be considered. These issues differ from one organization to another, but ideally it is suggested that all the personnel in the organization have to be appraised irrespective of their levels and the appraisal has to be carried out through self-appraisal or out sourcing methods. The methodology to be followed again differ according to the nature of the business but the combination of both structured forms and questionnaire or personal interview are considered good. Finally, the time period of the appraisal should be decided on the basis of the needs of the organization.

4. Implementing appraisal program: the next step is implementing the appraisal program according to the appraisal design and results of the appraisal have to be communicated to the HR department, so that they can do the follow-up according to the appraisal objectives.

5. Appraisal feedback: this is one of the important step in the process of appraisal, often many managers feel that employees generally experience a face-saving issue they hear that their actual performance is not as good as they had perceived it to be.

6. Post appraisal actions: the main objective of performance appraisal is to improve the long term performance of an employee based on the appraisal. The post appraisal actions may be to reward the outperformers and to guide and train the underperformers. It also aims to eliminate those organizational factors which are obstacles for effective performance.

Benefits of Performance appraisal in Higher Education System:

1. Promotion: promotion may be the result of a teacher's proactive pursuit of a higher ranking or as a reward by Institution for good performance. The purpose of performance appraisal system of promotion is that it helps management to see which Teacher would be more beneficial for the Institution. Promotion helps the management to increase the work load and to assign the work in order to get fruitful results from that Teacher.

2. Enhancement of Employee's progress: The valid performance appraisal process helps the management in preparing policies and programs of the Institution in a better way. It helps the management to assign the jobs to capable Faculty members. Such appraisals at work also help in casing future expansion line ups. The progress of every Faculty has to be equally viewed in order to enhance a chance for progression in their career.

3. Assortment validation of employee's stability: Performance appraisal systems help the management to understand the validity and significance of the actual staff evaluation course of action. Superiors come to know about their Faculty strengths and in this way, they also come to know about the potency and weak point of staff appraisal procedure. Any changes in the appraisal system could be modified in such methods. It reflects to keep up the effectual stability part of the employees as well. When an employee gets very good appreciation and job appraisal after working for the year, the chance of their stability involuntarily increases and it decreases the attrition rate in the company.

4. Tool of Motivation: Performance appraisal also serves as a motivational tool. This motivates the faculty for performing better in job and helps him to perk up their presentation for the future as well. Performance appraisals increase their strength level and motivate them to the utmost and they can carry out even much

improved performance in future. The Management must motivate their faculty members, so that it could boost up their strength level and they can perform wisely and productively.

Impact of performance appraisal system on employee satisfaction

The impact of a performance appraisal system on employee satisfaction is significant and multifaceted. When executed effectively, a performance appraisal system can positively influence various aspects of an employee's satisfaction within an organization. Here are key points outlining the impact:

Recognition and Appreciation:

- **Positive Impact:** Regular performance appraisals provide a platform for recognizing and appreciating employees' contributions and achievements.
- **Effect on Satisfaction:** Feeling valued and acknowledged enhances employee satisfaction, fostering a positive perception of their role within the organization.

Feedback and Improvement Opportunities:

- **Positive Impact:** Constructive feedback during performance appraisals helps employees understand their strengths and areas for improvement.
- **Effect on Satisfaction:** Employees who receive guidance on improvement feel supported and are more likely to be satisfied, knowing the organization is invested in their professional growth.

Clarity in Expectations:

- **Positive Impact:** Performance appraisals often clarify expectations regarding job roles, responsibilities, and performance standards.
- **Effect on Satisfaction:** Clear expectations reduce ambiguity, leading to higher satisfaction as employees have a better understanding of what is required of them.

Career Development and Growth:

- **Positive Impact:** Performance appraisals identify opportunities for career development, training, and skill enhancement.
- **Effect on Satisfaction:** Knowing that there are avenues for personal and professional growth within the organization contributes to higher job satisfaction.

Fair Recognition and Rewards:

- **Positive Impact:** Performance appraisals serve as a basis for recognizing and rewarding employees based on their performance.
- **Effect on Satisfaction:** Fair and transparent reward systems increase satisfaction by ensuring that employees feel their efforts are fairly compensated.

Employee Involvement and Communication:

- **Positive Impact:** Involving employees in the appraisal process and maintaining open communication fosters a positive workplace culture.
- **Effect on Satisfaction:** Feeling heard and involved in decision-making contributes to overall job satisfaction and a sense of belonging.

Motivation and Engagement:

- **Positive Impact:** A well-designed performance appraisal system can motivate employees by setting clear goals and expectations.
- **Effect on Satisfaction:** Motivated employees are more likely to be satisfied with their work, as they see a direct connection between their efforts and organizational success.

Job Security and Stability:

- **Positive Impact:** Performance appraisals may provide employees with a sense of job security and stability, especially when their contributions are recognized.
- **Effect on Satisfaction:** Job satisfaction is often higher when employees feel secure in their positions and confident in their future within the organization.

In conclusion, a positive and effective performance appraisal system can contribute significantly to employee satisfaction by fostering a culture of recognition, providing opportunities for growth, and establishing clear communication channels. When employees perceive the process as fair, transparent, and supportive, it enhances their overall satisfaction with their roles and the organization.

Impact of performance appraisal system on employee satisfaction

The impact of a performance appraisal system on employee motivation is profound, influencing various aspects of an individual's commitment, engagement, and enthusiasm at work. Here are key points outlining the impact of a performance appraisal system on employee motivation:

Recognition of Achievements:

- **Positive Impact:** Performance appraisals provide a formal opportunity to recognize and celebrate employees' achievements and successes.
- **Effect on Motivation:** Feeling acknowledged and rewarded for their efforts boosts employee motivation, encouraging them to maintain or improve their performance.

Feedback and Improvement Opportunities:

- **Positive Impact:** Constructive feedback during performance appraisals guides employees on areas for improvement and development.
- **Effect on Motivation:** Employees who receive feedback and support for improvement are motivated to enhance their skills and performance, leading to increased job satisfaction and motivation.

Goal Setting and Clarity:

- **Positive Impact:** Performance appraisals often involve setting clear goals and expectations for the future.
- **Effect on Motivation:** Clearly defined goals provide employees with direction, purpose, and a sense of achievement when they successfully meet or exceed expectations.

Career Development Opportunities:

- **Positive Impact:** Performance appraisals identify opportunities for career development, training, and skill enhancement.
- **Effect on Motivation:** Knowing that there are avenues for personal and professional growth within the organization motivates employees to invest effort in their roles.

Fair Recognition and Rewards:

- **Positive Impact:** Performance appraisals serve as a basis for recognizing and rewarding employees based on their performance.
- **Effect on Motivation:** Fair and transparent reward systems, such as salary increases or bonuses, act as strong motivators for employees to excel in their work.

Employee Involvement and Participation:

- **Positive Impact:** Involving employees in the appraisal process fosters a sense of ownership and participation.

- **Effect on Motivation:** Employees who feel their opinions are valued and considered in the appraisal process are more likely to be motivated and engaged in their work.

Job Satisfaction and Engagement:

- **Positive Impact:** A well-executed performance appraisal system contributes to job satisfaction.
- **Effect on Motivation:** Job satisfaction is closely tied to motivation; satisfied employees are more likely to be motivated, committed, and engaged in their roles.

Clarity in Performance Expectations:

- **Positive Impact:** Performance appraisals help clarify performance expectations and standards.
- **Effect on Motivation:** Clear expectations provide employees with a roadmap for success, boosting motivation by reducing ambiguity and uncertainty.

Alignment with Organizational Goals:

- **Positive Impact:** Performance appraisals align individual goals with organizational objectives.
- **Effect on Motivation:** Knowing that their efforts contribute to the overall success of the organization motivates employees to actively pursue and achieve organizational goals.

In summary, a well-designed and effectively implemented performance appraisal system positively impacts employee motivation by recognizing achievements, providing feedback and improvement opportunities, setting clear goals, and aligning individual efforts with organizational objectives. When employees feel valued and supported, their motivation to excel and contribute to the organization's success is enhanced.

Conclusion:

Performance appraisal is not only beneficial in corporate world but it also proved its efficiency in Higher education system where there is huge human force. Through effective performance appraisal system job performance of an employee is determined and evaluated. Proper performance feedback can improve the employee's future performance. Effective method of Performance appraisal has resulted in increase of job stability of the Faculty members and

also proved to be an effective tool of motivation to the employees. In order to attract and retain the best talent in higher education, the Institutions can give bonus or additional allowance to the better performers. The management can also provide financial assistance to the faculty members who take up professional growth courses or research activities.

In summary, an effective performance appraisal system plays a crucial role in shaping employee satisfaction and motivation by providing feedback, recognition, career development opportunities, and fair rewards. When implemented thoughtfully, it creates a positive workplace environment that fosters employee engagement and commitment.

References:

- https://www.researchgate.net/publication/357768489_Benefits_of_Performance_Appraisal_System_in_Higher_Education_Institutions_a_conceptual_study/link/61de9668323a2268f99af1ed/download?_tp=eyJjb250ZXh0Ijp7ImZpcnN0UGFnZSI6InB1YmxpY2F0aW9uIiwicGFnZSI6InB1YmxpY2F0aW9uIn19
- https://blog.clearcompany.com/what-is-performance-appraisal-system
- https://www.selecthub.com/hris/employee-performance-management/performance-appraisal-system/
- Nisha Solanki (2017). Managing performance appraisal in Higher education system, ISSN 2455–2526; Vol.06, Issue 03
- Neda Jalaliyoon & Hamed Taherdoost (2012). Performance evaluation of higher education; a necessity, Procedia - Social and Behavioral Sciences.

Impact of Gandhian Philosophy-Ahimsa in Contemporary Society – An Analysis

Dr. Rajesh Kumar Tiwari

Associate Professor
Department of Philosophy and Yoga
Nehru Gram Bharati (Deemed to be University),
Prayagraj

Man is a rational and social creation of God. Man lives in a society and all the actions reactions of the man influence the social behaviour. Society is an organization of human being also, So the functions done by men are important to develop or spoil the nature of society. Here I want to say something about Ahimsa-especially the Ahimsa theory of Mohan Das Karm Chandra Gandhi, popular with the title of Mahatma Gandhi. Mahatma Gandhi or Babu is the foremost pioneer of the Modern India. He is a man of ethico-religious personality, that is why he adopts a non violant means to get our country ridden of the British rulers.

The word Ahimsa has a big meaning Ahimsa is derived from the Sanskrit verb root *san* ,which means to kill. Another form *hims* means "desirous to kill", and the prefix a- is a negation. So here the meaning of a Ahimsa is lacking any desire to kill. In another words we can say that literally translated Ahimsa means to be without harm, to be utterly harmless not only to one self and others but to all living beings in the society. Here we can see that the term Ahimsa seems to be as negative one but it is quite positive. One who hold Ahimsa must win overall his evil forces. Ahimsa is more than not doing violence, it is more than attitude, it is a whole way of life. The concept Ahimsa extends to all living beings and therefore protection of the environment, natural habitats and vegetarianism are its natural derivatives. Ahimsa in the Indian tradition is a very important principle. It is called that it has been pronounced by Jain Acharya but it could be traced in Upanishads, Manusmriti and Patanajali Yogasutra. It has been seen in Upanishad as- "the ancient name Adhawara (where not any type

dhwara or himsa is available) suggest the absence of himsa. It could be seen in" Ishopanishad where it is said- ek x`g% dL;fLo/kkue~ (which is of others do not desire) menas here is an indication to be away from the mental violence which is being developed by greediness.[1]

In above views Ahimsa is an act of non killing and non injury to any one in thought, action and speech. Mahatma Gandhi modifies this negative meaning of Ahimsa and says that the rigidness of Ahimsa that Jainism preached is quite impractical to follow. Gandhi remarks on the Jain Ahimsa. "Man can rest for a moment like without consciously or unconsciously committing outwards himsa. The very fact of living, eating, drinking, and moving about necessarily involves some himsa surely, destruction of life, be it ever so minute".[2] He says that all human beings are equal as they all are the only sons of God. "All men are manifestations of Truth or God so nobody should have feelings of hatred, anger, malice, revenge jealousy etc. The moral qualities underlying the human inner core and originated from love. Without love Ahimsa is impossible. In other words, Ahimsa, in the positive sense is nothing but love. The inherent element of love is fearlessness. So Gandhi says that Ahimsa does not mean meak submission to the will of the evil doer.[3]

According to Gandhi Ahimsa is a religious philosophy of life that all living being are pure. Gandhi believe pluralism, he believe in Hindu- muslim unity including all sections of society rich poor. His focus is communal harmony. Gandhi knows how to unite different diversity of India, communal harmony where we need non violence (Ahimsa). Here I am stating that Ahimsa was soul theory in time of Gandhi but there are many changes in the contemporary society. Human beings have been involved to achieve the material values by using different paths of life. In those paths Ahimsa is not being followed fully or I can say that human beings are focusing to show the pseudo character of true life. Many people respond the ideas of Gandhi that no body is able to attain the theory of Gandhian Ahimsa or not every body can be Gandhi and not evry body can fight back. So ultimately Ahimsa is unattainable. They people say that the Ahimsa theory is not practical and moral but Gandhi denies these allegations and says Ahimsa is a moral law that we need to observe independently of the results however it takes place to have great result too. Ahimsa requires action and the name of that action is Satyagrah. Another interesting implication of Gandhi's way of putting Ahimsa into action is non-

possession. In that context he says that just live so others by which you can care about people. You would not take more than you need instead give your excess to others to save their lives "The world has enough for everyones need but not enough for everyone's greed. " Thus Ahimsa involves sacrifice and suffering. Sacrifice is an indispensable companion of love. Gandhi says. "love never claims, it ever gives. Love ever suffers, never resents never revenges itself. The taste of love is Tapasya amd Tapasya is self suffering".[4]

So here we can see that Gandhi has answered to those people who say that the theory of Ahimsa is impractical or not doing. Gandhi has established that the persons who are only involved to gathering the material achievements can not see the inner virtues of moral value Ahimsa because Ahimsa demands self suffering and sacrifice. He adopts Satya as like Ahimsa. He does not differentiate between Satya and Ahimsa. He says that satya is end and Ahimsa is menas. They are inseparable as the two sides of a coin. Gandhi says "Ahimsa is means and Truth is end. If we take care of menas, we are bound to reach the end sooner or later, what-ever difficulties we encounter, whatever apparent reserves we sustain, we may not quest for Truth which alone is, being God Hismself."[5]

The nature of contemporary social activities are changed than the society activities of Gandhi's imagine. Now a time all welfare societies are a form of society in which every individual is satisfied with his own wants. It is the society where nobody against on the ground of sex, wealth, race, religion or sect. everyone has an equal opportunity in life his personality and career. Contemporary society is influenced by the modernity and post modernity where spiritual values are chalanged against the material values. People of this society have become egoistic. In this society there is a discrimination among the people in every corner of life. Intolerance, no co-operation, brotherhoodlessness, self satisfaction etc are the essential qualities in maximum human being can be seen. We can see that our contemporary society is very much influenced by the doctrine of monarchy, aristocracy as we are feeling day by day. For the modern country as America, Britane or any other materially developed places such type of attributes are tolerable but in our country India which is known by its culture and spiritually such type of attributes are not lawful naturaly to protect the theories given by saints or the thinkers as like Mahatma Gandhi. In this society maximum people are interpretating the negative and practical implication of

Gandhi's theory Ahimsa which would have never been thought of Gandhi even in this dream. This is why every man, every political party each social-organization should adopts Gandhi's theory of Ahimsa in character and deeds. Till when our society will be covered by the darkness of corruption, nepotism and disunity, discrimination, mendacity, casteism, atrocities and exploitation we can understand the Ahimsa theory of Gandhi in true sense. Gandhi's view to remove such types of activities this is very important that a man should always be truthful. When the human being will be truthful in action and in thought then they will be much far from the evil type of activities. According to Gandhi to achieve the Ahimsatmak society all men will have to be generous, kind and compassionate. If all men of society are covered by above mentioned virtues then there will be no chaos in society, no quarrel , no jealousy , no hatred among the human beings. This pious society can be constructed by Ahimsa, we can see the view of Dr Ramjee Singh a famous Gandhivadi saying that- "Ahimsa or non violence must serve as the panacea for our ills-social and economic , political and moral"[6]. Kalghatgi finds the credit of Gandhi in his principle to stimulating the Ahimsa as- "It is method of attaining social and political justice apart from the religious and moral perfections."[7]

In the concept of Gandhian Ahimsa there are many thinkers who criticize that Gandhian theory Ahimsa is not acceptable in the society because the trend of society at the very small things two persons start to quarrel and in last they become killer-enemies for each other. One of them must be killed by the other the other can argue that ailing person was not useful for the society and must be killed. In another example provided by such persons that Ahimsa as Gandhi is love and love only gives, it does not take. It implies that a man should give the human society his affection and goodness by performing his duties towards society without any lust or any return. In this context the duties of political leader and social reformers must be so, but most of our leaders and social reformers, barring a very few exceptions in our society claim to take all the things from the common people of the society and not want to help them. It is the real application of Gandhian Ahimsa in current society. Some criticizers say that of love is self suffering then no body will want to adopt it. It is a common human psychology that a man does not want suffering but happiness. Ahimsa is love hence it is self suffering. Here Gandhi's principle love as generosity and compassion turn into non-violence as suffering and violence. Suffering and

violence are negative values of life. So the principle of Gandhian Ahimsa as a moral value is nothing but a self contradictory principle which has harmed our society and is being harmed it. But these allegations on the Gandhian Ahimsa have no grounds. The persons who are criticizing the theory of Gandhian Ahimsa are not aware by the philosophical aspects of Gandhi. We know if we are human then we have sex, anger, jealousy. affection, hate etc in basic character of human being. These characters are behaved is parameter of being good or bad. Gandhi aspects of well behaved nature of human beings, where truth morality, kindness and brotherhoodness are compulsory Gandhi says that Ahimsa requires pitifulness and kindness. Each and every human being should be pitiful and kind. The service to humanity depends upon these two gentle qualities. If all men of society are pitiful and kind, there will be kind no chaos no exploitation. There will be peace in the society. Gandhi feels that the progress and development of a society needs strife and struggle. This contemporary society is influenced by consequence of different wars, struggle and strives. Gandhi suggests for humanistic society where the value of truth and Ahimsa are essential attributes of human being then there will be no wars and no struggle. Each and every person will be for each other. He points out that nobody wants to suffer himself in the contemporary society. Each and every person wants to enjoy oneself, merely enjoy.

The Gandhian philosophy of Ahimsa is endless. The persons who criticize this theory they do not have well behaviour of spirituality and morality, because most people are involved to only and only their self material development they do not hesitate to give the troubles to the other people they think about only their own-self. Gandhi says that there will be some problems to follow the theory of Ahimsa but it could be done by strong will and truthfulness.

In last as conclusion I will want to say that it is question in the contemporary society that the Gandhian principle Ahimsa must be followed or not? Here my vision is- we can not ignore the fact that without following the principle of Ahimsa the peace is not possible which is desired by every country and countrymen. As example that the terror we can get from Ukraine's recent war against Russia is increasing and we can see how much world need Ahimsa in present scenario-especially considering the nuclear age where one country has the power to destroy another with just on one click, the principle of Ahimsa of

Gandhi is revealed. There are many times when the problems are solved by love and care not by force and himsa. There are many countries and peace keeping organizations work around the world to promote peace rather than militancy when in an era of globalization spiritual power seems to be being built up as a whole. We can see that world is interdependent. We can not wage war, we need peace. Harmony in the society or community becomes very important and must exist in every society in the current time when hatred against the community grows and guides the nations of the world in the wrong directions. In the very last I will conclude to stating that Ahimsa is an active force in the world infact we are practicing it correctly. Ahimsa is active force of the highest order, imperfect man can not grasp the whole of that essence- he would not be able to bear its full blaze but even an infinitesimal fraction of it, when it becomes active within us, can work wonders. Finally I agree with the above Gandhian statement.

References:

1. Isopanished-1
2. An Autobiography-M.K.Gandhi-page-487
3. Young India, 11 August,1920 Page-13
4. Ibid, 9th July 1925 and 12th June 1922.
5. Mahatma Gandhi, from Yerveda Mandir Page-9
6- Ram Jee Singh. The relevance of Gandhian thought. Page-55
7- T.G. Kalghatgi- The Jain's doctrine of Ahimsa Page-17

पुस्तक समीक्षा

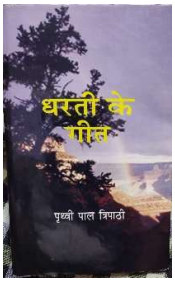

पुस्तक का नाम– धरती के गीत

लेखक– पं0 पृथ्वी पाल त्रिपाठी
प्रकाशन – मां प्रकाशन, दहेंव, बालवरगंज, जौनपुर
संस्करण– प्रथम
पुस्तक में कुल पृष्ठों की संख्या– 80 पृष्ठ

कवि वह है जो अपने पूरे जीवन को कविता की डोर में पिरो दे। हर पल को एक पंक्ति मानकर हर दिन नई कविता के प्रतिमान को पूरा करे। जीवन के विभिन्न झंझावातों को छन्दों, गीतों के स्वरों में जीवन रूपी यात्रा में गुंजायमान करता रहे। सुखों को जीवन का अमूल्य पल न मानकर समत्व के भाव से अभिभूत हो। मन के निजी भावनाओं को अपनी सीधी सादी भाषा में जनमानस के उर में उतार दे, वहीं कवि है।

प्रस्तुत समीक्षा एक ऐसे ग्रामीणांचल के कवि की है जो हिंदी साहित्य के इतिहास की मोतियों में गिरजा दत्त शुक्ल 'गिरीश' की बगिया के फूल, यमदग्नि की कर्मस्थली में जन्मा तथा आलम की केलियों में पला बढ़ा तथा अपने जीवन को एक आदर्श नागरिक की तरह शिक्षा में न्योछावर कर दिया। कवि ने अपने क्षेत्र में अनेकों विद्यालयों, महाविद्यालयों की स्थापना की। जो कि आज भी अपने गौरव से उदीयमान है।

कवि त्रिपाठी जी ने क्षेत्र विकास के कार्यों के साथ ही कृषक जीवन का भी निर्वहन किया है। उनकी कविता का एकमात्र अनूठा उदाहरण उनकी रचना धरती के गीत है। जो अपने नाम से ही वीर भोग्या वसुंधरा की पंक्ति को दोहराती है। कवि अपनी रचना में शहरी एवं ग्रामीण दोनों परिस्थितियों को उजागर किया है। कवि के द्वारा संचालित विद्यालय की अति जीर्ण शीर्णता का ही उद्वेग था कि आप मुंबई जैसे महानगर में जाकर अपनों का सहयोग मांगा तथा दोनों का समावेश कवि की इस कविता में दृष्टिगोचर होता है।

" भवन की गति है करुणामयी
रूदन है करती वसुंधरा।
देख उसकी गति कुगति को
प्रत्येक जन में दुःख भरा।
समय तो अति भव्य पुनीत था
समिति का भी समर्थन प्राप्त था

किंतु विद्यालय महज कंकाल था
आज है साभार यह हर्ष है
पूरी हुई आराधना यह उत्कर्ष है।"

कवि अपने जीवन के संघर्षों को बयां करते हुए बड़े ही अनूठे अंदाज में कहता है।

हाय! ये जीवन हमारा है भरा संघर्ष से।
संतोष बस इतना ही है हारा नहीं अपकर्ष से।।

कवि ने अपने उन क्षणों को जीवन्त किया। जब उन्हें लगा कि यह संघर्ष हमें खुद लड़ना है।

होगा बड़ा अपवाद इसका जो सुनेगा यह कथा।
रथ छोड़कर हम भागते कुरुक्षेत्र बन जाने के बाद।
हे सखा पछताओगे कुछ दिन गुजर जाने के बाद ।।

समाज में अच्छे और बुरे दोनों प्रकृति के लोग होते हैं। जीवन उन्ही में जीना ही अपने में एक कला है। लेकिन कवि त्रिपाठी ने कहा कि

नहीं यह दिल कहता था कि ऐसे साथियों के साथ आऊं मैं
पिलाकर दूध का प्याला जहर का सांप पालू मैं।
मगर एहसास होता था कि मंजिल पार कर लूंगा।
लिखा तो नसीब में था कि गर्दीसे चांद चूमूगा।।

कवि कहता है कि यह उपवन मारीच का है। जहां पर हम शांन्ति, उन्नति एवं राममय संसार देखना चाहते हैं। इन सभी परिस्थितियों के बीच कवि की गंगा जमुनी तहजीब भारत के समृद्धि, यश, वैभव, शौर्य, चमक को पिरोती हुई कवि की यह पंक्तियां देश के प्रति प्राण न्योछावर करने के लिए आतुर कर देती हैं।

बढ़ते चलो ये वीरों कश्मीर है तुम्हारा,
देना पड़ेगा उसको देता है जो सहारा।
भगवान् मेरे मन में बस एक ही विचारा,
खिलती रहे ये कलियां हंस दे चमन हमारा।।

कवि को उर्दू शायरी का भी मुनासिफ इल्म जरूर था। उनकी इन पंक्तियों में उर्दू तहजीब बयां होती है।

मंजिलों को लूट लेना पर कारवां चलने तो दोगे।
छांव देना या न देना फूलने फलने तो दोगे।
अवरोध का मकसद है गोया, राह को बनने तो दोगे।
राह चलना या न चलना राही को चलने तो दोगे।
महफिले जमकर सजाना शाम कुछ ढलने तो दोगे।

खुदकुशी कर ले अंधेरा रोशनी जलने तो दोगे।
जश्न का दीपक जलेगा, घर अभी बनने तो दोगे।
दिल्लगी कहते त्रिपाठी, दिल्लगी करने तो दोगे।

जीवन पथ में कभी दुःख कभी सुख की अनुभूति होती है। ऐसी स्थिति में कवि ने कहा कि

दुःख शोक जो जब आ पड़े
सो धैर्य पूर्वक सब सहो।
होगी सफलता क्यों नहीं,
कर्तव्य पथ पर दृढ़ रहो।

कवि के मानस में जीवन की मधुर स्मृतियां ही उसकी शक्ति और प्रेरणा के स्रोत हैं। अपनी स्मृतियों के दर्पण में कवि ने अपना अतीत, वर्तमान और भविष्य देखा है। वह अपनी कविताओं में विभिन्न प्रसंगों में अपने जीवन संघर्ष के साथियों को विस्मृत नहीं कर पाता।

चाह नहीं कहीं राज मिले यह
चाह नहीं धन संपत्ति ख्याति।
चाह नहीं सुख स्वर्ग मिले
अस चाह नहीं भव मुक्ति सुहाती।
चाहत न कामिनी कंचन
चाह न व्यंजन भॉति– भॉति।
त्रिपाठी यही बस देव प्रभो वर
पीड़ित सेव करूं दिन राती। ।

कवि की कविता में बस उन असहयों की सेवा चित्रित है जो वास्तव में अपकर्ष, निंदा, कटुता, आलोचना, भेदभाव आदि से आहत है। एक मध्यमवर्गी ब्राह्मण कुल में उत्पन्न कवि यदि ऐसी विचारधारा से ओतप्रोत होकर कविता का सृजन करता है, तो वह वास्तव में प्रशंसनीय है।

युवा वर्ग हो या हमारे समाज का कोई भी जो आशा, विश्वास एवं सतत् संघर्ष से अपनी कर्मठता से किसी लक्ष्य की प्राप्ति करना चाहता है। तो कवि की ये पंक्तियाँ उसे ऊर्जा, जोश एवं ताकत प्रदान करती हैं।

जिंदगी का सफर शेष कितना अभी
यह न सोचो कि साथी चलेंगे सभी।
नित पढ़ो मार्ग में लक्ष्य रख सामने
प्राप्त होगी सफलता कभी न कभी।।

प्रस्तुत पुस्तक में भले ही शब्दों की जटिलता ना हो, पांडित्य न हो, दर्शनिकता के प्रचुर तत्व ना हो, छंदों की लड़ियां ना हो, किंतु कवि अपनी कविता से जीवन को जीता है, खेलता है,

हंसता है, मुस्कुराता है, गुनगुनाता हैं और एक दृढ संकल्प और नई ऊर्जा से अपने अल्हड़पन से सौ वर्षों तक जीता है। वही उसकी सफलता है।

अतएव इस धरती के गीत नामक पुस्तक से हर मानव को अपने से जोड़कर रखने की जरूरत है। वही मानव की असली संजीवनी है। अंत में किशोर दा कि वह पंक्तियां बरबस याद आ जाती हैं।

आ चल के तुझे मैं ले के चलूं इक ऐसे गगन के तले।

जहाँ गम भी ना हो, आंसू भी ना हो, बस प्यार ही प्यार पाले।।

समीक्षक
डॉ0 विनय कुमार त्रिपाठी

सम्पादक
शोधमार्तण्ड
प्राचार्य
श्री गौरीशंकर संस्कृत महाविद्यालय
सुजानगंज, जौनपुर (उ0प्र0)